भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

श्री १००८ दिगम्बर जैन मंदिर, महावीर जी

वीर निर्वाण संवत् - 2535
चैत्र कृष्ण पक्ष वि.सं. 2065 मार्च 2009
मूल्य : 10/-
वर्ष : तृतीय अंक : सप्तम

विद्या वाणी

- ➡ मन की व्यग्रता रोकने का नाम ध्यान है।
- ➡ जिसका अशन तथा आसन पर नियंत्रण है वही ध्यान लगा सकता है।
- ➡ आत्म ध्यान के लिये न एयर कण्डीशन की जरुरत है न किसी कण्डीशन की।
- ➡ एयर कण्डीशन में ध्यान करने वालों की दुःख के समय कण्डीशन बिगड़ जाती है।
- ➡ ध्यान एक ऐसा प्रयोग है जिससे संसारी प्राणी भी उर्ध्वगमन कर सकता है।
- ➡ मंत्र ज्ञान, पाठ, जाप, चिंतन तथा ध्यान इन सभी में बहुत अंतर है, सिद्धि ध्यान से होती है।
- ➡ तीनों योगों का पूर्ण विराम ही ध्यान है।
- ➡ जो दिख रहा है सो ''मैं नहीं हूँ'' किन्तु जो देख रहा है सो ''मैं हूँ'' इसका प्रतिदिन 5 मिनिट ध्यान करना चाहिये।

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति

कार्यालय : एम-8/4 गीतांजलि काम्प्लेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल फोन : 0755-2673820

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति की नींव सन् 2004 में संतशिरोमणी आचार्य श्री 108 विद्यासागर महाराज के परम प्रभावक शिष्य पूज्य मुनिश्री 108 आर्जवसागर महाराज के आशीर्वाद से हुई। इस समिति के गठन का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे समूह को तैयार करना है जो कि जैन धर्म के मूल नियमों का पालन करता हो (रात्रि भोजन त्याग, देवदर्शन आदि)।

यह संस्था जीव दया व अहिंसा के प्रचार के साथ-साथ पशु रक्षा हेतु गौशाला के संचालन में सहयोग तथा विभिन्न नगरों में पाठशालाओं को अपग्रेड करने के साथ-साथ संचालन में सहयोग करती है। यह संस्था गौशाला तथा पशु रक्षा करने वाली संस्थाओं में समर्पित व्यक्तियों का सम्मान भी करती है। आप भी इस समिति की सदस्यता ग्रहण कर हमारे उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग कर सकते हैं। सदस्यता ग्रहण करने हेतु आपको एक फार्म भरना होगा जिसमें जैन धर्मों के मूल नियमों के पालन हेतु शपथ पत्र पर हस्ताक्षर करने होंगे। यदि आप इस समिति के कानूनन सहयोगी बनना चाहते हैं तो निर्धारित शुल्क जमा कर यथानुसार सदस्यता ग्रहण कर सकते हैं।

वर्ष 2004 से अब तक समिति को मुनिश्री आर्जव सागर महाराज द्वारा लिखित लगभग 12 पुस्तकों का प्रकाशन, पाठशालाओं के संचालन में सहयोग तथा मुनि संघों के प्रवास/चातुर्मास के दौरान अनेक सेवाएँ देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

भोपाल से प्रकाशित **भाव विज्ञान** पत्रिका का नवीन अंक आपके हाथों में है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य जैन धर्म के अनुसार विज्ञान की प्रगति के बारे में बताना है। हमारे मन में आने वाले धार्मिक भावों को विज्ञान से जोड़ने वाली यह पत्रिका विशेष रूप से नयी पीढ़ी के मन की धार्मिक शंकाओं को दूर करने का प्रयास करेगी। समिति के समस्त सदस्यों को भाव विज्ञान पत्रिका नियमित रूप से निःशुल्क भेजी जाती है।

सम्पर्क सूत्र :

महामंत्री	संयुक्त सचिव	कोषाध्यक्ष	उपाध्यक्ष	अध्यक्ष
अजित जैन	**अरविन्द जैन**	**अविनाश जैन**	**राजेन्द्र चौधरी**	**डॉ सुधीर जैन**
94256 01161				9425011357

सदस्य -**पवन जैन, श्रीमती संगीता जैन**

संरक्षक : श्रीमती शीलरानी नायक, पनागर, श्री राजेश जैन रज्जन, दमोह, श्री सुनील कुमार जैन, सतना, श्री महावीर प्रसाद जैन, सतना, श्री राजेन्द्र जैन कल्लन, दमोह, श्री अजित जैन, भोपाल, श्री महेन्द्र जैन, भोपाल, **आजीवन सदस्य : दमोह :** श्री मनोज जैन दालमिल, श्री महेश जैन दिगम्बर, **सदस्य :** श्री शांतिलाल वागडिया, जयपुर, **दमोह :** श्री संजीव जैन शाकाहारी, श्री तरूण सरार्फ, श्री पदम लहरी।

शुभाशीष

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी
के धर्म प्रभावक परम शिष्य परम पूज्य
मुनिश्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज ।

रजिस्ट्रेशन क्रं. **MPHIN/2007/27127**

त्रैमासिक **भाव विज्ञान**
(BHAV VIGYAN)

तृतीय वर्ष
अंक सप्तम

● *परामर्शदाता* ●
प्रोफेसर एल.सी. जैन
दीक्षा ज्वेलर्स के ऊपर, सराफा, जबलपुर
मोबा.: 94253 86179

● *सम्पादक* ●
श्रीपाल जैन 'दिवा'
शाकाहार सदन, एल-75, केशर कुंज,
हर्षवर्द्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)
फोन : 4221458, 9893930333, 9977557313

● *प्रबंधक सम्पादक* ●
डॉ. सुधीर जैन
प्राध्यापक, शास. महारानी लक्ष्मीबाई
कन्या स्नातकोत्तर महा., भोपाल
मो.: 0755-2577882, 9425011357

● *सम्पादक मंडल* ●
डॉ. सी. देवकुमार, नई दिल्ली
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
अजित कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
डॉ. संजय जैन, पथरिया, (म.प्र.)

● *कविता संकलन* ●
पं. लालचंद जैन 'राकेश'
नेहरू चौक, गली नं. 4, गंजबासौदा
(विदिशा) म.प्र. मोबा.: 94253 72740

● *प्रकाशक* ●
श्रीमती सुषमा जैन
एमआईजी 8/4, गीतांजलि काम्पलेक्स
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.)
फोन : 0755-2673820

● *सदस्यता शुल्क* ●

शिरोमणी संरक्षक	:	51,000
परम संरक्षक	:	21,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,000
विशेष सदस्य	:	3000
आजीवन सदस्य	:	1000

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं
रचनाएँ सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक — **पृष्ठ**

1. सम्पादकीय — श्रीपाल जैन 'दिवा' — 2
2. सम्पूर्ति लेख — प्रो. एल.सी. जैन — 5
3. ध्यान में क्या छोड़ना — मुनि आर्जवसागर — 7
4. पूजा प्रताप — श्रीपाल जैन 'दिवा' — 10
5. अनुपम कृति तीर्थोदय काव्य — डॉ. श्रीमती अल्पना जैन — 12
6. जैन चित्रकला की वैज्ञानिकता — डॉ. रोली व्यवहार जर्मनी — 13
7. सम्यक् ध्यान शतक — मुनि आर्जवसागर — 14
8. जैन संस्कृति की रक्षा एवं विकास में नारी की भूमिका — डॉ. सीमा जैन — 16
9. आज बिदा की बेला — पं. लालचन्द जैन 'राकेश' — 21
10. दिगम्बर जैन मुनि:एक समीक्षा लेख — सुरेश 'सरल' — 28
11. साहित्य सत्कार — प्रो. एल.सी. जैन — 33
12. समाचार — 34

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

दिगम्बर जैन तीर्थों की रक्षा के प्रयोगात्मक उपाय

– श्रीपाल जैन 'दिवा'

वर्तमान सर्वधर्म समभाव का काल है। कोई भी शासक/देश/समाज अपने पालित धर्म के अतिरिक्त अन्य धर्म की उपेक्षा या क्षति पहुँचाने का दुस्साहस नहीं कर सकता। ना ही करना चाहिए। यह विश्व शांति का एक समीचीन उपाय भी है। फिर भी अपवादों से संसार खाली नहीं है। जातिवाद-पंथवाद-नस्लवाद-सम्प्रदायों की कट्टरताएँ सिर उठाये बिना चैन नहीं लेती हैं। अपने विचार/सोच को अन्य पर थोपने का दुराग्रह का झण्डा ऊँचा किये रहना चाहते हैं। 'ही' के एकान्त में उलझ कर 'भी' के अनेकान्त की उपेक्षा कर ईर्ष्या द्वेष अहं और कलह कोर्ट के द्वार खोल देती है। अन्तहीन समाधान विहीन लड़ाई प्रारम्भ हो जाती है। वर्तमान में महातीर्थ शिखर जी, गिरनार जी, मक्सी पार्श्वनाथ जी आदि दिगम्बर जैन तीर्थ उदाहरण हैं। फिर भी संवाद से समाधान मिल सकते हैं। वे हो भी रहे हैं। प्रयास जारी है जारी रहना भी चाहिए।

दिसम्बर 2008 के भाव विज्ञान में ग्वालियर गोपाचल महातीर्थ की चर्चा हमने की थी। आचार्य विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य प्रवर मुनि श्री आर्जवसागर जी ने अपने 2008 के वर्षावास में विशेष भावना से समाज को जागृत किया।

ग्वालियर किले ऊपर प्राचीन पंचखण्डा वर्द्धमान/महावीर जिनालय व उसके परिसर को सिन्धिया स्कूल प्रबन्धन ने अतिक्रमण कर कब्जा किया और मंदिर का मार्ग ही बन्द कर दिया है। मूर्तिया इधर उधर करवा दी हैं। भगवान आदिनाथ की अत्यंत मनोज्ञ मूर्ति स्टेच्यू के रूप में प्राचार्य के आवास के उद्यान की शोभा बढ़ा रही है। उनका दर्शन पूजन शुभ धार्मिक क्रियाओं पर आतंक का साया है। प्रवेश निषिद्ध है। किसी की हिम्मत नहीं जो वहाँ जा सके। परन्तु दबंग तपस्वी मुनि श्री आर्जव सागर जी वहाँ पहुँचे। पुलिस प्रशासन पर उनके आत्मानुशासन की विजय हुई। दिगम्बर जैन समाज जागृत हुई। इतना साहस आया कि वे श्री ज्योतिरादित्य सिन्धिया जिनको ग्वालियर के लोग महाराजा मानते हैं उनसे अपना हक लेने की बात करने लगे। ज्योतिरादित्य जी प.पू. मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज के दर्शन करने पहुँचे। चर्चा हुई वायदे किये मन्दिर तक मार्ग खुलवाने दर्शन पूजन का हक दिलवाने में सहयोग करने के। परन्तु वायदों की धज्जियाँ उड़ाते हुए सिन्धिया स्कूल परिवार ने अपने दो परिचितों के द्वारा ग्वालियर हाईकोर्ट में प्रार्थना पत्र लगवा दिया कि मन्दिर हमारा है हमें दिया जाय। दोनों व्यक्ति श्वेताम्बर बन्धु हैं। दिगम्बरों की पीठ में छुरा भोंकने का अवसर सम्प्रदायवाद ने दे दिया। अरे दिगम्बर जागो, हुँकार भरो, अपना हक माँगो, मन्दिर मुक्ति के अभियान में जो साधर्मी प्रयासरत हैं उनके हाथ मजबूत करो। अखिल भारतवर्षीय तीर्थ रक्षा कमेटी के अध्यक्ष/महामंत्री ग्वालियर गोपाचल तीर्थ के दर्शन करें सारी स्थिति को आँखो देखी बनावें। सम्पूर्ण ग्वालियर किला एक महान दिगम्बर जैन तीर्थ है। विशाल मूर्तियाँ व मंदिर एकल पाषाण खण्डों पर उत्कीर्णित हैं। जैन शिल्प-सौन्दर्य का कोष है ग्वालियर का गोपाचल पर्वत।

सर्म्पूण तीर्थ-वैभव-सम्पदा की रक्षा कैसे हो इसके कुछ प्रयोगात्मक उपाय अपनाये जा सकते हैं जिनकी चर्चा हम यहाँ कर रहे हैं।

प्राचीन काल के सारे तीर्थ, तीर्थंकरों/श्रमणों के निर्वाण स्थली वाले सिद्ध क्षेत्र या देवों द्वारा अतिशय किये जाने के कारण या स्वप्नादि के फलस्वरूप खुदाई में निकली दिगम्बर मूर्ति के कारण अतिशय क्षेत्र के रूप में स्थापित

हैं। जो धर्म प्रभावना के प्रबल स्त्रोत भी हैं और धार्मिक प्रेरणा के पुंज भी हैं। इनके दर्शन की ओर समाज उन्मुख हो। अर्थात तीर्थाटन की प्रवृत्ति में अभिवृद्धि हो।

1. **तीर्थाटन की प्रवृत्ति की प्रेरणा व प्रचार :** प्रथम तो जो जहाँ निवास करता है वहाँ के जैन मंदिर में प्रतिदिन जाकर साधर्मी बन्धु जिनेन्द्र देव के दर्शन/पूजन करने की प्रशस्त टेव डालें। इसमें बुजुर्ग व स्थानीय विद्वान योगदान देवें। माता-पिता बच्चों को लेकर मंदिर दर्शन करने जावें। बच्चे के हाथ में एक रूपये-दो रूपये का सिक्का देकर दान-पेटी में डालने की आदत डालें। यह संस्कार बच्चों को 'दानवीर' बनाने में बड़ा सहायक सिद्ध होता है। परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत रखते हुए हर साल एक-दो बार तीर्थाटन करने की योजना बनाना चाहिए। तीर्थ जाकर दर्शन-पूजन-प्रवचन स्वाध्याय के साथ दान देकर तीर्थ की आर्थिक समृद्धि में योगदान देवें। तीर्थों के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धा होनी चाहिए। तीर्थ हमारी श्रद्धा के स्मारक है-प्रेरणा के स्त्रोत हैं - धर्म की प्रभावना के भास्कर हैं। तीर्थ का आर्थिक स्वास्थ्य हृष्ट-पुष्ट होगा तो व्यवस्था में चार चाँद लग जावेंगे। सुन्दर स्वच्छ धर्मशालाओं का निर्माण भोजनालयों का निर्माण ये सब वर्तमान में आवश्यक हैं। ये तीर्थाटकों को आकर्षित करते हैं। यद्यपि तीर्थ श्रद्धावश लोग जाते हैं। परन्तु सुविधाएँ बार-बार जाने को उत्साहित करती हैं यह कटु सत्य है।

जैन पत्रिकाओं में तीर्थाटन हेतु लेख कविताएँ छपने चाहिए जिनसे साधर्मी बन्धुओं को प्रेरणा मिले और तीर्थाटन कर धर्म लाभ लेवें। जितने अधिक तीर्थ यात्री पहुँचते हैं उतनी ही धर्म प्रभावना होती है और तीर्थं की आर्थिक समृद्धि बनी रहती है। धर्म प्रभावना व अच्छी व्यवस्था के लिये धन का अपनी जगह बड़ा महत्व है। यह यथार्थ व्यवहार है इस पर अच्छे से ध्यान दिया जाना चाहिए। तीर्थाटन हेतु आधुनिक मीडिया द्वारा भी प्रचार किया जा सकता है। तीर्थयात्रियों का आधिक्य एकान्त के सन्नाटों का अभाव कर तीर्थ रक्षा में सहायक सिद्ध होता है। देशाटन के साथ तीर्थाटन को श्रावक गण ध्यान दें। मुफ्त में तीर्थ रक्षा का पुण्य लाभ होगा।

2. **तीर्थ की व्यवस्था हेतु न्यास या समिति या स्थानीय परिषद :** इनके संचालक/अध्यक्ष/मंत्री आदि समाज द्वारा चुने पदाधिकारी होते हैं जो मानसेवी होते हैं पर जिनके पास व्यवस्था देखने का समय ही नहीं हो उनको चुना जाना ठीक नहीं है। समयाभाव वाले व्यक्ति को पद धारण स्वयं ही नहीं करना चाहिए। इनके अलावा मैनेजर (प्रबंधक), चौकीदार, माली, साफ-सफाई-झाडू-पौछा वाला दल भी होता है। ये वेतन भोगी होते हैं। इनका वेतन प्रायः बनियाई सोच के अनुसार शोषण वाला ही होता है। अर्थात कम वेतन काम ज्यादा। उसके परिवार का पालन भी ठीक से नहीं हो पाता। इस अर्थाभाव की स्थिति में वह मंदिर धर्मशाला तीर्थ के प्रति अपना उत्तरदायित्व निभाने में उदासीनता बरतता है। वह समर्पित भाव से तभी काम करेगा जब उसे आर्थिक असुविधा न हो। तीर्थों की रक्षा में मूर्ति चोरों से मूर्तियाँ बचाने में समर्पित श्रद्धालु व समर्पित कर्मचारी ही योगदान दे सकते हैं। क्षतिकारक घटनाओं से बचा जा सकता है।

तीर्थों एवं आसपास के निवासियों में तीर्थं प्रबंधक संस्थाएँ सेवा कार्य के माध्यम से उनकी सदभावना प्राप्त कर तीर्थ की सुरक्षा में सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। जैसे महासमिति द्वारा आचार्य विद्यासागर जी महाराज के प्रमुख प्रभावक विद्वान शिष्य मुनि श्री प्रमाणसागर जी की प्रेरणा से शिखरजी के आसपास के चौदह गाँवों में उनकी आर्थिक समृद्धि के उपाय शिक्षा एवं स्वास्थ्य के प्रबन्ध की पहल अनुकरणीय है।

3. **सेवा कार्य :** तीर्थों के आसपास के निवासियों में हमारी प्रबंधक समिति सेवा कार्यों के माध्यम से उनकी सद्भावना प्राप्त कर तीर्थ की सुरक्षा में सहयोग प्राप्त कर सकती है। जैसे महासमिति ने यह काम प्रारम्भ किया है। वैसे

ही आचार्य विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक विद्वान शिष्य पू. मुनि श्री प्रमाणसागर जी की प्रेरणा से सेवायतन का निर्माण हुआ। सेवायतन ने शिखर जी के आसपास के चौदह गाँवों को गोद ले लिया। उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु दुधारू पशुओं का प्रबन्ध कर रोजगार दिया उनके बच्चों के लिये पाठशाला एवं उनके स्वास्थ्य के लिये अस्पताल का प्रबन्ध कर रहे हैं। उनकी अटूट श्रद्धा सहानुभूति तीर्थ के प्रति हो गई वे शिखरजी की रक्षा के लिये हृदय से तैयार हो गये। सेवा सबसे बड़ा अहिंसा का कार्य है। सेवायतन अपने प्रयास से उनको शाकाहारी अहिंसा के प्रति उन्मुख बना रहा है। शराब का त्याग भी महत्वपूर्ण अभियान है। उनमें शुद्ध आचरण वाला जीवन जीने की ललक पैदा हो रही है। महान परिवर्तन सेवा का प्रतिफल है। हर तीर्थ का एक सेवायतन होना चाहिए। अनुकरणीय प्रयास है। इसे सभी तीर्थों के लिये एक स्वर से मान्य करना चाहिए। तीर्थ रक्षा कमेटी ऐसा प्रस्ताव पारित कर सेवायतन स्थापित करने का पवित्र कार्य अपने हाथ में ले साधुओं के आशीर्वाद के साथ।

4. **सेवा निवृत्त जैन कर्मचारी अधिकारी या वृद्धजन व अन्य इच्छुक श्रद्धालु, विद्वानों को तीर्थों से जोड़ना :** ऐसे सभी साधर्मियों के आवास एवं भोजन की उत्तम व्यवस्था रहे। प्रतिदिन विशेष प्रवचन, स्वाध्याय, भजन-पूजन, अर्चना का गेय व्यवस्थित कार्यक्रम हों। ये कार्यक्रम श्रद्धालुओं एवं तीर्थयात्रियों के लिये आकर्षक एवं ज्ञानवर्द्धन के केन्द्र बनें। इससे तीर्थ यात्रियों की संख्या बढ़ेगी। तीर्थों को आर्थिक सहयोग भी मिलेगा जिससे सुन्दर व्यवस्था में चार चाँद लगेंगे। अनेक आश्रम व संस्थान सेवानिवृत्त एवं वृद्धजनों के समूह सेवा में वहाँ जुटे हुए हैं। करोड़पति भी झाड़ू-पोछा लगाता मिल सकता है। अहं के विगलन का उत्सव हो रहा है वहाँ । हमारे यहाँ अहं के हिमालय खड़े हो रहे हैं। जो हमें अनेक हिस्सों में बाँट रहे हैं। जितने गणमान्य व्यक्ति उतने दल कहें या गेंग कहें। दुर्भाग्य ऊँचाई पर है परन्तु फिर भी निराश होने की आवश्यकता नहीं है। हमारे आचार्य उपाध्याय मुनि चलते फिरते तीर्थ हैं वे अपने तप के ताप से अहं के हिमालयों को पिघलाने की शक्ति रखते हैं। जमने और पिघलने की परम्परा संसार की है उत्साह के साथ समीचीनता को साथ रखते हुए विवेक के साथ हम सब मिलकर कार्य करें तो सफलता चरण चूमेगी। असम्भव कुछ नहीं सब सम्भव है सम्भवनाथ हमारे साथ हैं।

5. **तीर्थयात्रा का आयोजन :** अच्छी बसों एवं रेलों से तीर्थयात्रा करके तीर्थ यात्रियों की संख्या में वृद्धि की जा सकती है। समर्थ श्रीमानों के सौजन्य से तीर्थ यात्राएँ आयोजित की जा सकती हैं। जिनसे आर्थिक रूप से कमजोर साधर्मी उसका लाभ ले सकते हैं। समाज के श्रीमानों को धीमानों एवं श्रमणों (साधु) द्वारा प्रेरित किया जा सकता है। ऐसे आयाजनों से तीर्थों की रक्षा एवं धर्म प्रभावना के साथ तीर्थाटन की प्रवृत्ति के सुसंस्कार पड़ते हैं। जो पीढ़ी दर पीढ़ी अंतरित होते रहते हैं।

जातिवाद व पंथवाद से मुक्ति : जातिवाद ऊँचाई पर है। इससे निजात पाना बड़ा कठिन अवश्य है पर असम्भव नहीं है। मन्दिर, महासभा, महासमिति, तीर्थरक्षा कमेटी आदि सभी के चुनावों में जातिगत भावना व पंथवाद का सहारा लेकर चुनाव जीता जाता है अपवाद इसके हो सकते हैं। यहाँ तक कि हमारे पूज्य साधु को भी वाद और पंथ प्रभावित करते हैं। श्रावक भी सजातीय साधु की पूछ परख ज्यादा करते हैं। इस जातिवाद पंथवाद के चक्कर में तीर्थों की भी विकास यात्रा प्रभावित होती है। बल्कि तीर्थों पर हमारे अधिकार को ही घोर क्षति पहुँचती है। वाद और पंथों के चक्कर में ही मुकदमें लड़े जा रहे हैं। समाज की महान शक्ति का अपव्यय हो रहा है इसे बचाना सभी का कर्तव्य है। एकता का बिगुल बजाना होगा और वह बिगुल हमारे पत्रकार सम्पादक बन्धुओं को बजाना पड़ेगा।

तिलोयपण्णत्ती करणानुयोग ग्रंथराज की टीकाकर्त्री स्व. पूज्य विदुषी श्री १०५ आर्यिका विशुद्धमती (सम्पूर्ति लेख- पुण्यतिथि २२ जनवरी)

- प्रोफेसर एल.सी.जैन

जैन मित्र में पांच फरवरी 2009 के प्रकाशित लेख में पूज्य आर्यिका विशुद्धमती के जीवन चरित्र का संक्षेप में विवरण पढ़कर उनके कुछ और अज्ञात तथ्यों पर यह लेख उसकी संपूर्ति में दिया जा रहा है।

जब तिलोयपण्णत्ती ग्रंथराज की टीका पूज्य माता जी ने पूर्णरूपेण तैयार कर ली, उस समय मुझे संदेश मिला कि मुझे उदयपुर जाकर माताजी की टीका के गणितीय पक्ष को भलीभाँति देखना है और यथानुकूल उसमें संशोधन करना है। पहिले तो मैं आर्थिक कठिनाइयों वश रूका रहा किन्तु कुछ ही दिनों पश्चात् उनके दूसरे संदेश के साथ एक चेक था और मुझे सपत्नीक उदयपुर पूज्य माताजी की सेवा में उपस्थित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सागर जहाँ पूज्य माताजी ने महिलाश्रम में अनेक वर्षों तक सेवाएं दीं वह मेरी तथा मेरी पत्नि स्व. बसन्ती देवी (सौ. गुलाब रानी) की जन्म स्थली थी। मेरी पत्नि न केवल पूज्य माताजी की शिष्या थीं वरन पंडित पन्नालाल साहित्याचार्य की शिष्या भी रहीं थीं। पंडित जी ने मुझे भी विनती, पूजा आदि की शिक्षा दी थी।

उदयपुर जाने पर मुझे वहाँ के प्रतिष्ठित मिंडा ज्वैलर्स के घर पर अत्यंत विशिष्ट सुविधाओं के साथ रखा गया। पूज्य माताजी मेरी पत्नि को देखते ही पहिचान गईं और हमारा कार्य अगले दिन से प्रारंभ हो गया। पूज्य माताजी के पास एक छोटा सा केलकुलेटर था जिससे वे प्राय: सभी गणनाएं कर लेती थीं।

खाना खाने के पश्चात् ही मैं उनकी टीका देखने में व्यस्त हो जाता था तथा प्राय: तीन बजते ही उनके निर्देश पर मुझे फल तथा दूध का प्रबंध हो जाता, और पुन: एक या डेढ़ घंटे के पश्चात् उनके टीका के गणित के संबंध में चर्चा होती। यह प्रथम खंड पर कार्य था जिसमें एक स्थान पर मुझे विश्वविख्यात डा. आर.सी.गुप्ता को पत्र लिखना पड़ा और उन्होंने उसका यथोचित हल निकालकर दिया था। वह प्रकरण 'ख ख पदस्संस्स पुढम्' था जिस पर उनका अंग्रेजी में लेख अनेक विश्व प्रसिद्ध शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ था।

इस बार आते समय मैंने माताजी से छोटी पिच्छी की कामना प्रकट की थी और उन्होंने दो छोटी पिच्छियाँ बनवाकर मुझे दीं और कहा था कि इनका उपयोग केवल धर्म ग्रंथों को पुनीत करने में ही करना। उस समय उनके सानिध्य में एक ब्रम्हचारिणी थीं जो गुजरात से आई हुईं थीं तथा एम.ए. उन्होंने स्टेटिस्टिक्स में किया था। माताजी का अनुशासन संघस्थों के प्रति अत्यंत कठोर था और वह उनके माता-पिता तक कभी शिकायत भी पहुँचा कर उन्हें बुलातीं तथा हिदायतें देती थीं।

जब हम लोग प्रथम श्रेणी में घर वापिस आ रहे थे, उस समय डिब्बे के ज्वाइन्ट पर आग लग गई थी। रेलगाड़ी रोक दी गयी थी और हम लोगों ने दूसरे डिब्बे में स्थान लिया था। ऐसी घटना दूसरी बार भी हुई जब हम लोग माताजी के शेष खंडों का गणितीय कार्य देखने उदयपुर पहुचे थे, और घर वापिस होते समय पुन: रेल के डिब्बे में आग लगने से दूसरे डिब्बे में जाकर बैठे थे। दोनों बार रात्रि का समय था और ऐसा जीवन में पहली बार ही ऐसी घटनाओं का अनुभव हुआ था। यह अतिशय था। ग्रंथ के दूसरे व तीसरे खंड में पुन: एक गणित को सुलझाने में मुझे डा.आर.सी.गुप्ता (यूनेस्को के भारतीय प्रतिनिधि) का सहयोग लेना पड़ा था, क्योंकि ज्ञात सूत्रों के सिवाय एक अलग सूत्र का उपयोग था। चन्द्र परिवार की गणना करते हुऐ मैने माताजी से पूछा था कि इसकी गणना आधुनिक विधि से करूं या आगम विधि से। उनका उत्तर था कि आगम विधि से ही करो चाहे कितनी भी कठिनाई क्यों न हो। तब मुझे पुन: बड़े परिश्रम से उसे प्रस्तुत करना पड़ा था।

इस बार पूज्य माता जी से विदा लेते समय, माता जी ने एक डायरी दी थी जिसमें उन्होंने दो आशीर्वाद रूप अभिव्यक्ति दी थीं तथा एक यंत्र भी उसमें मेरी सकुशलता पूर्वक अध्ययन में उन्नति हेतु दिया था।

हाल ही में छतरपुर के डॉ. पी.सी.जैन तथा एडवोकेट श्री दशरथ लाल जैन का तिलोयपण्णत्ती के प्रथमखंड की आर्यिका विशुद्धमती जी की टीका का अंग्रेजी अनुवाद संशोधनादि हेतु, विगत वर्ष मेरे पास भेजा गया था। इसमें डायक्रिटीकल चिन्हों, आदि की पूर्ति न होने से इसके प्रकाशन में अभी विलम्ब है। यह ग्रंथ इसलिए अत्यंत महत्व का है कि इसके पूर्व का कोई भी करणानुयोग का ग्रंथ दिगम्बर सम्प्रदाय में उपलब्ध नहीं है, तथा कर्म ग्रंथों के लिए यह ऐसा फ्रेम रूप है जिसके बिना यथार्थ सिद्धान्त की रूपरेखाएँ स्पष्ट नहीं हो सकती हैं। यह कम से कम दो हजार वर्ष प्राचीन ज्यामिति पर आधारित है और यदि आधुनिक ज्यातिमतियों का आधार लिया जाये तो कर्म सिद्धान्त अभूर्तपूर्व रूप में ''थ्योरी ऑफ एव्रीथिंग'' का रूप ले सकता है।

अस्तु, आशा है जैन समाज इस ग्रंथ की इस टीका के अंग्रेजी अनुवाद में यथा शक्ति सभी प्रकार की सुविधाएँ जुटाने में अपने कर्तव्य का पालन करेगा। इस हिन्दी टीका का उपयोग जापान के प्रोफेसर तकाओ हयाशी, आदि अनेक विद्वानों ने हिन्दी पढ़कर शोध हेतु अतिशय रूप से किया है और अंग्रेजी अनुवाद होने पर दिगम्बर जैन समाज के हित में इसके कारण धर्म प्रभावना आदि के कार्य सम्पन्न हो सकेंगे।

आगम अनुकूल ग्रंथ/पुस्तकों की समीक्षा के लिए प्रकाशक/
लेखक अपनी पुस्तकें भेज सकते हैं।

- सम्पादक

ध्यान में क्या छोड़ना ?

- मुनि आर्जवसागर

समीचीन ध्यान को करने के लिए आप अपनी आत्मा को संयम से जोड़ें । पाँचों इन्द्रियों पर कन्ट्रोल रखें। कहीं वे इन्द्रियाँ पंच पापों में न चली जायें। कहीं वे इन्द्रियाँ राग, द्वेष में न लग जायें, जीवों की हिंसाओं में न रत हो जायें अतः इन्द्रिय संयम, प्राणी संयम का पालन करना तथा अपने जीवन में अहिंसा का अन्य रूप से भी पालन करना जैसे - रात्रि भोजन, जमीकंद आदि अभक्षवस्तु का त्याग करना, निर्मल जल जो गालन किया गया है ऐसा शुद्ध पेय जल अर्थात् जिससे अहिंसा का पालन हो उसका उपयोग करें। साथ-साथ में हम अपने जीवन में तप भी करें जैसे उपवास करें, एकाशन करें और रस परित्याग कर इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करें। जो पर को अपना मान रखा है कि यह अपना है यह मेरा-तेरा है ऐसा कहने से ध्यान नहीं होगा जब शरीर भी अपना नहीं है तो इन्द्रिय विषयों में राग करना अज्ञानता ही है। लोग कहते हैं कि -

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर संपत्ति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

फिर क्यों करते हैं मोह, जहाँ देह ही अपनी नहीं है तो दूर दिखने वाले पदार्थ अपने कैसे हो सकते हैं? तो ये सामने प्रकट रूप से दूर ही दिख रहे हैं। तो ये जब हमसे दूर हैं फिर भी पर पदार्थों को जो अपना मानना है कि ये मेरे हैं, मैं इनका हूँ उसके लिए आचार्य कुन्द कुन्द स्वामी समयसार के कर्त्ता-कर्म अधिकार में कहते हैं कि-

कम्मे णोकम्मह्मि य अहमिदि अहकं च कम्मणोकम्मं।
जा ऐसा खलु बुद्धि अप्पडिबद्धो हवदि ताव ॥

'कम्मे णोकम्मह्मि य' अर्थात् कर्म और नोकर्म; अष्ट कर्म हैं जो ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, और अन्तराय भेद रूप, प्रभेद करेंगे तो 148 हो जाते हैं। 'अहमिदि अहकं च कम्मणोकम्मं' ये कर्म मेरे हैं, मैं इनका हूँ या नोकर्म जो दिख रहे है यह शरीर और भी शरीर से सम्बन्धित पदार्थ ये मेरे हैं, मैं इनका हूँ 'जा ऐसा खलु बुद्धि' ऐसी जो बुद्धि है, इस अपनेपन की बुद्धि से 'अप्पडिबुद्धो हवदि ताव' वह अप्रतिबुद्ध अर्थात् अज्ञानी है। अज्ञानी बने रहेंगे तो कभी आत्मा का ध्यान नहीं हो पायेगा। आत्मा के ध्यान में उतरने के पहले सब पदार्थों का त्याग कर देना पड़ता है। यदि ऐसे त्याग न हो सके तो दान कर देना चाहिए। दान देना भी एक धर्म है। आप सत्पात्र को दान देते हैं। वस्तु को अर्पित करते हैं। जो आपने न्याय नीति से कमाया है वह धन धर्म वृद्धि का कारण होता है। योग्य पात्र को दिया गया वह दान एक राई के बराबर छोटे से बीज से वृक्ष की तरह बड़े वैभव के साथ फलता है, बहुत बड़ी छाया, बहुत सारे फल जैसा विशाल रूप लेता है। ऐसे ही दान देना भी एक षट् कर्मों में आया है। तो देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय,

संयम, तप और दान ऐसे षट् कर्मों के अन्त में जो चार प्रकार का दान है वह भी प्रतिदिन करना चाहिए क्योंकि कहा है 'षट्कर्माणि दिने दिने' कभी-कभी नहीं, प्रतिदिन करना है। जैसे कि मुनि लोग भी प्रतिदिन अपने षट्कर्म (आवश्यक) करते रहते हैं इसी प्रकार से श्रावक को अपनी आत्मा पावन, पुनीत बनाने के लिए ये षट् आवश्यक रूप समीचीन व्यवहार हैं और समीचीन व्यवहार के बाद निश्चय का नम्बर आता है और निश्चय पर पहुँचने के लिए सम्पूर्ण परिग्रह को त्याग करना अनिवार्य है। तभी निश्चय पर पहुँच सकते हैं। क्योंकि कुन्दकुन्द आचार्य कहते हैं कि-

परमाणुमित्तियं पि हु य रागादीणं तु विज्जदे जस्स।
णवि सो जाणदि अप्पाणयं तु सव्वागमधरोवि॥

ध्यान का सबसे उत्कृष्ट ग्रन्थ समयसार माना जाता है, वहाँ पर वे कुन्दकुन्द आचार्य आज से 2000 वर्ष पहले कह चुके हैं जिनकी यह वाणी परम पवित्र, पुनीत है। सीमन्धर भगवान के समवसरण में सुनकर के आये थे, वे क्या कह रहे हैं कि परमाणु मात्र भी राग जिसके अन्दर विद्यमान है अर्थात् ये पर पदार्थ मेरे हैं, चाहे शरीर हो, चाहे कर्म हो, कुछ भी हो। तो 'परमाणुमित्तियं पि हु य रागादीणं तु विज्जदे जस्स' जिसके अन्दर परमाणु मात्र भी राग, द्वेष, मोहादि विद्यमान है तो 'णवि सो जाणदि अप्पा' वह अपने आत्मा को नहीं जान सकता चाहे 'णयं तु सव्वागमधरोवि' पूरे आगम को भी क्यों न जानता हो। क्या इतना बड़ा मोह, इतने सारे वस्त्र, अलंकार इतना बड़ा घर, परिवार सब कुछ है तो भी वे अपनी आत्मा को जान रहे हैं। आत्मा को लक्षण रूप से जानना अलग है और अनुभव करना अलग है और वह आत्मा का अनुभव उस मीठे की तरह है जिस मीठे का स्वाद नमक की डली की तरह विषयों के उगले बिना नहीं आता केवल आत्मा-आत्मा रूप तोता रटन्त वाली बातों से कुछ होने वाला नहीं है। इसलिए हमें पुरुषार्थ करना पड़ेगा। राग, द्वेष, मोह से परे होना पड़ेगा। तभी हम अपनी आत्मा को जानेंगे। जैसे हमारे प्रभु ने जाना है। हम केवल प्रभु को तो जान सकते हैं न। अभी प्रभु को जानेंगे तो जरुर एक दिन नियम से वे प्रभु अपना जैसा बना लेंगे अर्थात् उनके मार्ग पर चलते-चलते उनके सदृश बन जायेंगे। किसी ने ठीक ही कहा है कि-

पड़े रहो दरबार में, धका धनी का खाव ।
इक दिन ऐसा आयेगा, स्वयं धनी बन जाव ।।

अरे! आओ तो कम-से-कम दरबार में। प्रभु के दरबार में आओ, गुरु के पास आओ तो गुरु एक दिन तुम्हें ठोकते-ठोकते अच्छा सोलावानी का स्वर्ण बना देंगे। ठोके या तपाये बिना बनता है क्या स्वर्ण? सब निकाल देंगे तुम्हारे अन्दर से जो किट्ट-कालिमा है उसे। आत्मा में अनादिकाल से जो संसार का राग, द्वेष और मोह रूप कर्मों का कचड़ा भरा है उसे सब साफ कर देंगे। जो ऐसे महान हैं वे देव, शास्त्र, गुरु उनके चरणों में हम आयें और समर्पित हो जायें कि-मैं आपका हूँ, आप जैसा रूप-स्वरूप देना चाहो तो मैं तैयार हूँ। जैसे मिट्टी समर्पित होती है कुम्भकार के हाथ में। वह कहती है कि मैं कुछ नहीं हूँ, आना-कानी नहीं करूँगी

आप जो बना दो, जो कुछ भी रूप देना हो सो दे दो। नहीं! नहीं! ऐसे नहीं करो वैसा नहीं करो ठोको-ठाको नहीं। तो जाओ, भाग जाओ हम नहीं बना पायेंगे तुमको। जब समर्पित हो जाते हैं उसको बोलते हैं 'उपसम्पत्'। मूलाचार में कहते हैं उपसम्पत् मैं जैसा हूँ सो हूँ, आपका हूँ आप जो भी करना चाहे तो कर लीजिए। मैं कुछ नहीं कहूँगा। तब बना लेते हैं अपना जैसा उसको। अच्छे रूप-स्वरूप देते हैं। ठोके-ठाके बिना तो कुछ होता नहीं। जैसे कुम्भकार पैरों से रोंदता है। सारे कंकड़-पत्थर को निकालता है, ठोकता है, पीटता है, जलाता है तब कहीं घड़े का रूप दे पाता है मिट्टी को। तो हमें भी समर्पित होना पड़ेगा। हम लोग तो अपनी मन की बात कहते हैं कि करना तो इतना ही करो नहीं तो मत करो। हम तो इतने ही सीधे हो सकते हैं और ज्यादा नहीं। तो रहे आओ भैय्या सीधे-साधे हमें क्या करना। बहुत ही सीधे-साधे हैं हसिया जैसे; हम क्या करें। और सीधे भी बोल रहे हैं आप कहने को सीधे हैं। तो सीधे होना समर्पण के बिना नहीं हो सकता। तो यह लोक जिसमें हम रह रहे हैं। यह लोक जो है कितना बड़ा है? इसमें सभी प्रकार के जीव हैं। षट् द्रव्य हैं हम किस रूप हैं और कौन-किस रूप है इसे भी थोड़ा जानिये-समझिये। तब कहीं हम जान पायेंगे कि ध्यान हमें क्यों करना है? कुछ पाना है तो कुछ करना है, कुछ पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ेगा अर्थात् बाहरी संयोगज को छोड़े बिना आत्मा के ध्यान से नहीं जुड़ पाओगे और जो भी छोड़ोगे वह पर है अपना कभी छोड़ा नहीं जाता।

✳✳✳

क्रमशः ....

वर्तमान में श्रमण मार्ग के, श्रेष्ठ सु-धारक आप रहे। चौथे युग की चर्या के भी, ज्ञाता उत्तम आप रहे॥
घोर तपों बहु उपवासों से, कर्म बंध को शिथिल किया। शान्ति श्री के पद कमलों में, मम मन ने यह नमन किया॥

जिनके पावन दर्शन पाने, श्रावक दौड़े आते थे।अमृतमय गुरु सदुपदेश से, शान्ति-सुधा को पाते थे॥
त्याग, दया वा क्षमाशीलता, गुण जीवन में लाते थे। शान्ति श्री की गौरवता को, सब मिल करके गाते थे ॥

शूरवीर बन इस भारत की, तीर्थ वंदना जिनने की। सत्य, अहिंसा धर्म पताका, नभ में फहरा जिनने दी॥
श्रमण जनों के दर्शन का ये, स्वप्न यहाँ साकार हुआ। शान्ति श्री का जीवन दर्शन, जन-जन का हितदर्श हुआ॥

ज्ञानी, ध्यानी महाव्रती वे, स्वानुभवी व समधनी थे। पूजा, ख्याति प्रलोभनों से, सुदूर वे शिरोमणी थे॥
अहंकार का नाम नहीं था, ओंकार से पूरित थे। शान्ति श्री जी इस धरती पर, धर्ममार्ग की मूरत थे॥

सरल वृत्ति का शान्त सरोवर, जिनमें है लहराता था। स्याद्वाद के तट से बँधना, इस जग को सिखलाता था॥
सभी मतों से बने एकता, धर्म सूत्र हैं बतलाए। जीव मात्र पर करुणा के थे, सबक आपने सिखलाए ॥ 5॥

'' नेक जीवन से साभार''

पूजा – प्रताप

– श्रीपाल जैन 'दिवा'

पूजा क्रूर कषाय को, कृश करती है नित्य ।
अशुभ से शुभ में जाय मन, साधन शांति सुनित्य ।।

पूजा मोक्ष उपाय है, साध्य नहीं, दो ध्यान ।
संकल्प विकल्पों से रिते, मन एकाग्र सुध्यान ।।

पूजा पुण्य उपाय है, पुण्य सुसाता देय ।
शुभ-शुभ चिन्तन शुभ क्रिया, अशुभ पाप हर लेय ।।

शुभ चिन्तन शुभ क्रियाएँ, दूरे अशुभोपयोग ।
मोक्ष मार्ग प्रशस्त कर, निकटे शुद्धोपयोग ।।

गुरु सेवा प्रभु स्मरण, कारण पुण्य महान ।
स्वाध्याय ही करा सके, शुद्ध आत्म पहचान ।।

गुरु दर्शन, सेवा बड़ा, महापुण्य का योग ।
बड़े भाग्य गुरु सामने, अवसर शुभ उपयोग ।।

देव-शास्त्र-गुरु भक्त बन, बन जाओ भगवान ।
स्वाध्याय कर नित रमो, निज में निज का ध्यान ।।

देव-शास्त्र-गुरु त्रयी में, श्रद्धा साँची होय ।
श्रावक तू आचार बिन, शब्द ज्ञान खर ढोय ।।

तप करने को तन 'दिवा', नासो कर्म सुजान।
बढ़ के आतम भानु से, जिन सी है सज्ञान ।।

जिन पूजा में भाव भा, करूँ निर्जरा कर्म ।
नहीं ऐषणा हित करूँ, धारूँ तद्गुण धर्म ।।

तुम सा बन जाऊँ प्रभू, निज ही निज को ध्याऊँ।
पूजा पुण्य प्रताप से, मोक्ष राह चल पाऊँ ।।

धन-वैभव तृणवत तजा, त्यागा प्रिय संसार ।
उन जिन की पूजा करूँ, माँगू क्यों संसार ।।

जो माँगे वह मर गया, भव-भव भटके दूर ।
बिन माँगे पूजा करो, बनो मुक्ति के शूर ।।

तृण-धन तार न पास जिन, वे गुण धर्म की खान।
जिन पूजे जिन से बनो, तारक पुण्य महान ।।

जिन पूजा का लक्ष्य हो, मोक्ष, पुण्य के पार ।
स्वाध्याय संयम बिना, होवे न बेड़ा पार ।।

पूजा से परमात्मा, स्वाध्याय का योग ।
पुण्य प्रताप से ही मिटे, भव-भव भटकन रोग ।।

आत्म - सूर्य

रात बहुत बीत गई। सभी लोगों के साथ इंतजार कर रहा हूँ कि वे सामायिक से बाहर आएँ और हमें उनकी सेवा का अवसर मिलें। सोच रहा हूँ, कितना अद्‌भुत है जैन मुनि का जीवन कि यदि वे आत्मस्थ हो जाते हैं, तो स्वयं को पा लेते हैं और आत्म-ध्यान से बाहर आते हैं, तो हम उन्हें पाकर अपने आत्मस्वरूप में लीन होने का मार्ग जान लेते हैं।

दीपक को धीमे-धीमे प्रकाश में उनके श्री चरणों की मृदुता मन को भिगा रही है। हम भले ही उनकी सेवा में तत्पर हैं, पर वे इस सब से बेभान अपने में खोये हैं। अद्‌भुत लग रहा है इस तरह किसी को शरीर में रहकर भी शरीर के पार होते देखना।

वह रात देखते-देखते बीत गई। दूसरे दिन सूरज बहुत सौम्य और उजला लगा। आज मुझे लौट जाना है। लौटने से पहले जैसे ही उनके श्री चरणों को छुआ और उनके चेहरे पर आयी मुस्कान को देखा तो लगा मानों उन्होंने पूछा हो कि क्या सचमुच लौट पाओगे? क्या कहता? कुछ कहे बिना ही चुपचाप लौट आया और अनकहे ही मानो कह आया कि अब कभी कहीं और, जा नहीं पाऊँगा। उनकी आत्मीयता ने मन को छू लिया है कि जैसे सुबह ऊगते सूरज ने द्वार खोलते ही अपनी प्रकाश रश्मियों से बाहर भीतर सब तरफ से हमें भिगो दिया हो। अपने इस आत्म सूर्य को मेरा प्रणाम।

- मुनि क्षमासागर

आज बिदा की बेला आई

(एक ध्यातव्य रचना)

- पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'

1.

आना-जाना शाश्वत क्रम है, इसको कौन रोक पाया है।
कल निश्चित जाना है उसको, आज यहाँ पर जो आया है ।।
मत आने में हर्ष मनाओ, मत जाने में करो रुलाई ।
आज बिदा की बेला आई ॥ 1 ॥

2.

तन का पाना जन्म कहाता, तन वियोग ही मृत्यु वरण है ।
किन्तु आत्मा अजर-अमर है, इसका होता नहीं मरण है ।।
शुद्ध-अमूर्तिक-अक्षय-चेतन, जिनवाणी पहचान बताई ।
आज बिदा की बेला आई ॥ 2 ॥

3.

एक पेड़ पर पक्षी आकर, कर लेते हैं रैन बसेरा ।
उड़ जाते है दिशा-दिशा में, जैसे ही होता है सबेरा ।।
वैसे ही परिवार हमारा, चन्द दिनों की भेंट-भलाई ।
आज बिदा की बेला आई ॥ 3 ॥

4.

यह संसार धर्मशाला इक, जीव पथिक संज्ञा पाता है।
बढ़ जाता अपनी मंजिल पर, जब जिसका क्रम आ जाता है ।।
उचित नहीं स्नेह जोड़ना, मोह की फाँस बड़ी दुखदाई ।
आज बिदा की बेला आई ॥ 4 ॥

5.

देखो भैया! चलती बिरियाँ, अशगुन करना उचित नहीं है।
जय जिनेन्द्र के शब्द उचारो, जाती बिरियाँ शगुन यही है ।।
सार्थक रहा उसी का जीवन, जिसने मरण समाधि लगाई ।
आज बिदा की बेला आई ॥ 5 ॥

सम्यक् ध्यान शतक

- मुनि आर्जवसागर

गतांक से आगे.........

जीव द्रव्य आधार है, ध्याता साध्य स्व-जीव ।
संहनन आदि अजीव व, हेतु देव, गुरु जीव ॥ 18॥

वज्रवृषभनाराच यह, संहनन वर मानो ।
ध्यान धार शुभ, कर्म फिर, नशें, मोक्ष जानो ॥ 19॥

खड्गासन व पद्मासन, सिद्धासन का योग ।
वीरासन व वज्रासन, ध्यानी बने अयोग ॥ 20॥

अशन राजसिक, तामसिक, जिसे छोड़ना श्रेष्ठ ।
सात्विक प्रासुक हो अशन, ध्यान बढ़े, वय जेष्ठ ॥ 21॥

आमिस, नशा, कंद तज, निशि में छोड़े भोज ।
मर्यादित, शोधित अशन, स्वस्थ ध्यान हो रोज ॥ 22॥

एक बार भोजन करे, योगी वह कहलाय ।
द्वय बार भोगी करे, त्रय रोगी हो जाय ॥ 23॥

अर्ध उदर भोजन करे, दुगुना जल हो ध्यान ।
तिगुना परिश्रम जो करे, बड़े उम्र धीमान ॥ 24॥

खोवा, मेवा लड्डु ये, होयँ पदार्थ गरिष्ठ ।
अपने प्रिय पदार्थ सब, कहलाते हैं इष्ट ॥ 25॥

इष्ट, गरिष्ठ पदार्थ वा, स्त्री का संसर्ग ।
व्यसन सभी सद्ध्यान में, बाधा दें उपसर्ग ॥ 26॥

हो उपवास, एकाशन, हल्के पन सह ध्यान ।
न प्रमाद, निद्रा जगे, मुनि अनुभूति मान ॥ 27॥

क्रमशः

दिगंबर जैन मुनि : एक समीक्षा

पुस्तक का नामः दिगंबर जैन मुनि, ग्रंथकर्ताः पू. मुनि श्री 108 समतासागर जी महाराज (गुरु : राष्ट्रसंत आचार्यप्रवर श्री 108 विद्यासागर जी महाराज)

आज हमारा प्रगतिशील समाज स्वादिष्ट भोजन प्रदान करने वाले अनेक होटलों के नाम जानता है। किंतु उत्तम पाठन सामग्री देने वाले ग्रंथों के नहीं? जब नाम ही नहीं जानता तो पढ़ेगा क्या? प्रस्तुत पुस्तक एक नामवर होटल से अधिक मायने रखती है। और जो जिन्स (आयटम) प्रदान करती है। वे पाठक के मन और मस्तिष्क को स्थायी महत्व की संतुष्टी देते हैं।

समाज जिन महान दिगंबर वेशधारी साधुओं के दर्शन करने अनेक कष्ट उठाकर जाता-आता रहता है। इनके विषय की अनेक जानकारियों से वह जीवनभर अछूता रहता है। ऐसे समर्पित धर्मज्ञों के लिए पू. मुनि समतासागर जी ने इस कृति के माध्यम से दिंगबर-मुनि के परिचय और चर्चा को पारदर्शी बना दिया है।

पहले वे कथन करते हैं कि विभिन्न मतों में दिगंबर तत्व को भरपूर महत्व दिया गया है। चाहे ग्रंथराज महाभारत देखें, चाहे वैराग्य शतक (भतृहरी), चाहे गुरुग्रंथ साहिब और चाहे बायबल सभी अपने-अपने स्तर से प्रतिसाद देते मिले हैं। मुनिवर ने एतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भी दिगंबर जैन मुनियों के प्रवास और विहार पर प्रकाश डाला है और स्पष्ट किया है कि, मौर्य-सम्राटों, सम्राट सिकंदर, बादशाह सेल्यूकस, सम्राट सम्प्रति, बादशाह आंगस्टस, सम्राट खारवेल से लेकर प्रजा सम्राट महात्मा गाँधी तक ने जैन संतों के अस्तित्व को स्वीकार किया है और उनसे शिक्षाएँ ग्रहण की हैं।

पू. समतासागरजी ने एक स्थल पर स्पष्ट किया हैं कि सन १९३८ के आसपास भारत के दक्षिणी भूभाग- निजाम राज्य-में दिगम्बरत्व पर बंदिश लगाने का प्रयास किया गया था, जिसे प.पू. आचार्य शांतिसागरजी महाराज की प्रेरणा से समाप्त किया गया था। समतासागर जी लिखते हैं कि वर्तमान आचार्य, राष्ट्रसंत, गुरुदेव श्री विद्यासागर जी महाराज आगम के घरातल पर, सर्वोदयी भावना से अनुप्राणित हो जिन शासन की प्रभावना और अहिंसा तथा जीवदया की जादुई-बाँसुरी बजा रहे हैं। वे महावीरत्व के प्रमुख लोक चेतनावादी प्रतापी सैनिक हैं। हैं नूतन महावीर।

दिगम्बरत्व और जैन मुनिचर्या समतासागरजी ने सरल भाषा में भ्रमनाशक १७ बिन्दुओं पर सुंदर चर्चा की है। जिसमें मुनि के विहार, प्रवास, केशलौंच, दिगंबरत्व, अपरिग्रह, आदि पर प्रेरक सामग्री है। मुनियों के २८ मुलगुणों का आगमोचित कथन पहले संस्कृत में फिर हिंदी में प्रस्तुत करते हुए ५ महाव्रतों, ५

समितियों, ५ इंद्रियों का नियंत्रण, छः आवश्यक और सात विशेष गुणों का वर्णन आत्मसात करने योग्य है। अन्य गुणों का कथन करने वाला स्थल (पृ. 34) बार-बार मननीय है।

मुनि की नग्रता के कारण जानने के लिए यह पुस्तक आईना का कार्य करती है। फिर खड़े होकर भोजन, केशलौंच का अभिप्राय, अस्नान व्रत की वैज्ञानिकता, उबला जल और प्रासुक भोजन पर प्रकाश डाला गया है। दिगंबर मुनि के उपकरणों का परिचय, आहार चर्या का अनुशासन मुनि दीक्षा से पूर्व की जाने वाली साधना, दीक्षा प्रक्रिया को शोधपरक दृष्टि प्रस्तुत किया गया है। दिगंबर जैन साधु की ३ श्रेणियाँ और प्रायश्चित विधि गुरु-शिष्य और श्रावक को पठनीय है। यह पुस्तक जैन धर्म में स्त्री सन्यास का रहस्य खोलती है। और निवास-प्रवास का ज्ञान भी कराती है।

मुनिजीवन का चरम सल्लेखना-व्रत पर पूरा होना, समाधि लेना और देह का अग्निसंस्कार करना भी संकलन में जानने मिलता है। जैन मुनि अपनी साधना से समाज को योगदान देते हैं। वह किसने देखा ? पृ. ५८ पर दर्शाया गया है। अंत के पन्ने पर मुनि की दिनचर्या के रेखा चित्र अबोले ही बहुत कुछ कह देते हैं।

पुस्तक मात्र पठनीय नहीं है संग्रहणीय भी है। ऐसी पुस्तकें आड़े समय पर टॉर्च की तरह उपयोगी सिद्ध होती हैं। १३ जुलाई ६२ को नन्ही देवरी म.प्र. में जन्में गुरुदेव श्री. समतासागरजी महाराज ने ४६ वर्ष की आयु में अनेक सुंदर ग्रंथ लिखकर लोगों को भेंट किये हैं। उनके सार्थक लेखन की तरह उनके बोधगम्य प्रवचन भी सभ्य समाज में चर्चा बनाये रहते हैं। सच वे दोनों जगह पर प्रवीण हैं। दोनों विधाओं का आचार्यत्व उनके भीतर पालथी मारकर बैठा हुआ है। हमें दर्शन भी हो रहे हैं। वे धन्य हैं। उन्हें नमन।

चर्चाकर्ता : - सुरेश जैन 'सरल'
405, गढ़ाफाटक, जबलपुर

डा. जयकुमार जैन को पुत्र शोक

अ.भा.दि. जैन शास्त्रि परिषद् के पूर्व महामन्त्री एवं वर्तमान उपाध्यक्ष सुप्रसिद्ध जैन विद्वान् डॉ. जयकुमार जैन संस्कृत विभागाध्यक्ष-एस.डी. पी.जी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर के युवा पुत्र इंजीनियर श्री अभिषेक जैन का ३० जनवरी २००९ को निधन हो गया है। श्री अभिषेक जैन प्रारंभ से प्रतिभाशाली रहे हैं तथा प्रत्येक परीक्षा में सभी विषयों में विशेष योग्यता प्राप्त करते रहे हैं। उनके निधन पर अनेक सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं ने अपार दु:ख अभिव्यक्त किया है।

जे.पी. जैन
पूर्व प्रधानाचार्यं

अनुपम कृति तीर्थोदय काव्य

- डॉ. श्रीमती अल्पना जैन

कुंदकुंद - सी वीर प्रवृत्ति वीर सेन सी वाणी है ।
समंतभ्रद सी तार्किक शक्ति इनमें बड़ी निराली है ।।
सागर सा गंभीर हृदय है सरिता से उपकारी है ।
मुनि आर्जवसागर जी को शत् शत् नमन् हमारी है।।

भारतीय संस्कृति धर्म प्रधान संस्कृति है। यहाँ की पुण्य वसुन्धरा पर अनेकों विभूतियों ने जन्म लेकर अपने को आध्यात्मिक कसौटी पर कसकर उससे प्राप्त अनुभव के परिणामों को लिपिबद्ध कर अज्ञान अंधकार से ग्रसित मानवता को ज्ञानालोक प्रदान कर सत्य का समीचीन मार्ग प्रशस्त किया है। प्रतिभा अपना मार्ग स्वयं निर्धारित कर लेती है और अपना दीपक स्वयं ले चलती है। 'ज्ञानध्यान तपो रत्नः तपस्वी सः प्रशस्यते' की उक्ति से युक्त आदर्श जीवन के उन्नायक, सरल स्वभावी, मृदुभाषी परम पूज्य १०८ मुनिश्री आर्जवसागर जी महाराज अप्रतिम प्रतिभा के धनी हैं। स्व-साधना एवं साहित्य चर्चा में अनवरत निरत रहते हुए बहुज्ञानाभ्यासी मुनि श्री की प्रतिभा का स्फुरण भव्य जीवों के कल्याणार्थ धर्मभावना शतक, जैनागम संस्कार, परमार्थ साधना, तीर्थोदय काव्य और अभी हाल में ही ग्वालियर वर्षायोग के दौरान नया बाजार मंदिर में सृजित सम्यक् ध्यान शतक जैसे अनेक मोक्षमार्गोपयोगी ग्रंथ रत्नों की रचना के रूप में सृजित ही नहीं, निःसृत हुआ है। इनमें 'तीर्थोदय काव्य' मणिरत्नमय मोक्ष पथानुगामी भव्यों के लिये प्रकाशद्वीपवत है। जो अपनी अन्तर्दृष्टि एवं आध्यात्मिक शैली के लालित्य के कारण अत्यन्त सरल एवं उत्कृष्ट काव्य कृति है। परम पूज्य आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज के परम शिष्य परम मुनि श्री द्वारा रचित 'तीर्थोदय काव्य' सुभाषितों का भण्डार है। जिस प्रकार अमूल्य रत्नों का उत्पत्ति स्थान समुद्र है, उसी प्रकार यह षोड़शकारण भावनाओं का काव्य रत्नों का अक्षय भण्डार है, संसार से तिरने का काव्य है तीर्थंकर बनने का काव्य है। यह काव्य सीधे हृदय को प्रभावित करता है, इनमें लोकमंगल के विधायक तत्व, शाश्वत सत्यों के आख्यान एवं मानवीय संवेदना की गहन छाप, संचित ज्ञान राशि व अनुभूति का रत्नाकर है। कहा जाता है कि कवि बनते नहीं, जन्मते हैं पूज्य मुनि श्री के काव्य में इसी कारण सहजता, मार्मिकता, हृदय की गहराई, सरसता, गम्भीरता, भावों की श्रेष्ठता, आगम शब्दों का शब्दांकन, निश्छल उपदेश प्रवणता, लोक प्रचलित भ्रांतियों के निरसन रूप दर्शन यत्र-तत्र परिलक्षित होते हैं।

पदों को परस्पर मिलाकर तो सामान्य जन भी काव्य रचना कर सकते हैं, किन्तु उक्ति वैशिष्टय ही विशिष्ट है जो श्रोताओं व पाठकों के चित्त को स्फुरायमान करता है। हिन्दी, प्राकृत, संस्कृत या अपभ्रंश आदि कोई भी भाषा क्यों न हो उसमें उक्ति विशेष से काव्य सौन्दर्य सुशोभित होता है और पढ़ने-सुनने वाले बुद्धजनों के चित्त को आकर्षित करता है। अपभ्रंश भाषा के महाकवि प्रतिष्ठाचार्य पं. रइधू की दृष्टि में - ''उक्ति चमत्कार ही काव्य है क्योंकि उक्ति वैशिष्टय ही विद्वत् जनों के चित्त को स्फुरायमान करती है।'' पूज्य मुनि श्री

की यह काव्य रचना अनूठी सूक्ष्म अर्थ एवं गूढ़ पदों वाली है। इसे 'ज्ञानोदय एवं दोहामात्रिक छन्द में कुलसप्तशतक पद्यों में रचा गया है। जो श्रव्य है व्युत्पन्न बुद्धि वालों को आचरण करने योग्य है।'

व्यक्ति वैशिष्ट्य के अन्तरंग में जब परमात्मा का आराधन, चैतन्य की अनुभूति, मन की एकाग्रता, तन्मयता और चिन्तन का आवेग प्रस्फुटित होता है तो कभी भक्ति के रूप में भजन, गुंजन के रूप में गीत, रस बोध के रूप में कविता, तात्विक बोध के रूप में काव्य का आकार ग्रहण कर लेते हैं। काव्य के विषय में आठवीं शताब्दी के जैनाचार्य जिनसेन स्वामी आदिपुराण के प्रथम पर्व श्लोक ९४-१०६ में सविस्तार वर्णित करते हैं कि काव्य क्या है? आचार्य प्रवर ने पुराण में स्पष्ट बतलाया है - ''कवि का भाव अथवा कर्म काव्य मर्मज्ञों द्वारा काव्य कहलाता है। उस काव्य का प्रतीतार्थ शिष्ट, अलंकार युक्त और प्रसाद गुण पूर्ण होना चाहिए। कतिपय उसमें अर्थ सौन्दर्य, कुछ पद सौष्ठव तथा वाणी के अलंकरण को महत्ता देते हैं। हमारा मत है कि अर्थ और पद दोनों का सौन्दर्य अपेक्षित है एवं अलंकार सहित, रस समन्वित, सौन्दर्य युक्त मौलिक काव्य ही यथार्थ में काव्य है, जो सरस्वती के मुख के समान है।'' उक्त दृष्टि पर तीर्थोदय काव्य की रचना सटीक उतरती है। यह काव्य अनुभूतियों को सँजोने की विरल अध्यात्म रचना है। अनुभव जब सघन और गहन बन जाता है, तब अनुभूति के रूप में परिणत होता है। अनुभविक चिन्तनमय प्रसंगों को काव्य के रूप में अभिव्यक्त करना यद्यपि सारल्य नहीं है, फिर उसे आगम काव्य में निरूपित करना अति दुरूह कार्य है किन्तु एक आध्यात्मिक जगत के वैराग्य रस रसिक, छन्द अलंकारों के ज्ञाता, मोक्ष पथ के राही, मुनिपथ के पथिक के लिए अनुभूतियों को काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त करना सरल होता है, क्योंकि उनमें चारित्राचार से अध्यात्म अनुभूति का प्राबल्य होता है तभी काव्य में रसनुभूति का दर्शन होता है। विलियम ऐम्पसन के शब्दों में - 'जब कोई काव्य का अध्येता किसी सीधी-सादी पंक्ति से भी रस प्राप्त करता है, तब उसे इसमें जो बात सहायक होती है वह और कुछ नहीं वरन् उसका पूर्वानुभव अथवा विगत निष्कर्ष ही है।' मुनि श्री ने पूर्वाचार्यों द्वारा अनुभविक एवं निष्कर्ष तथ्यों को आगम संदर्भ में वर्णित किया है।

वस्तुतः सर्वश्रेष्ठ कला जगत में वही है जो आत्मा में सोये ब्रह्म को जागृत करने में, आत्मा में परमात्मा को प्रकट करने में सक्षम हो। परम पूज्य मुनि श्री अप्रतिम प्रतिभा के धनी ऐसे ही काव्य कलाविद हैं, जो अपने जीवन एवं काव्य दोनों से ही आत्मा में सोये परमात्मा को जागृत करने में अभूतपूर्ण प्रयासरत हैं। मुनि श्री वीतरागी संत होने के साथ ही संस्कृत, प्राकृत, तमिल, कन्नड़, मराठी, आंग्ल, हिन्दी आदि बहुभाषाओं के धनी हैं। आपने तीर्थोदय काव्य में जो शब्दावली प्रयुक्त की है उसमें आगम ग्रंथों के संदर्भों व प्रसंगों को आधारभूत में यथास्थान अभिव्यक्त किया है। यथा-सम्यग्दर्शन के अष्टांग उनमें प्रसिद्ध व्यक्तियों के दृष्टांत, पंचाणुव्रत के दृष्टांत, साधक की प्रतिमाएँ, समाधि मरण, श्रावक धर्म, पंचाचार, मूलगुण, मुनिधर्म, गुणस्थान आदि के साथ ही समवशरण का सुन्दर वर्णन वर्णित किया है। षोडशकारण भावनाओं को परिपक्व करने हेतु मुहावरों, कहावतों, सूक्तियों, प्रतीकों, प्रसंगों के यथेष्ठ सदुपयोग से काव्य में रमणीयता दिखलायी पड़ती है। तीर्थोदय काव्य में इनका वही स्थान है जो स्वर्ण आभूषणों में रत्न-नगीनों का होता है। दृष्टव्य है -

सदा पाप से घृणा करो तुम, पापी से नहीं घृणा करो ॥ १०६॥
चर्म चक्षु हैं नहीं काम के, जहाँ ज्ञान से चक्षु नहीं ॥ ३४९॥
हस्ति का स्थान समझ लो, रज से पुनः नहाना है ॥ ३९०॥
सूर्य किरण की चकाचोंध पर, जैसे आँखें ना टिकती ॥ ६०४॥
नहीं जगत में मेरे सदृश, ज्ञानवान पंडित कोई ।
नहीं महाकवि, शास्त्री मुझ सम, जग में और दिखे कोई ।।
जो भी दिखते आज सभी हैं, 'जुगनु' सम 'सूरज' आगे।
धार ज्ञान मत मिथ्यात्वी वह और प्रशंसा जो माँगे ॥ १२८॥
षोड्शकारण भावना, जानों मेरु समान ।
सब 'पर्वत' नीचे दिखें, दें शिवपद शुभ जान ॥ ६४२॥

इन पदों में जुगनू, सूरज, मेरु, पर्वत आदि शब्द प्रतीकात्मक रूप में लक्ष्यार्थ को स्पष्ट करते हैं। मुनि श्री की मनीषा यहाँ प्रखर एवं कालजयी झलकती है। जन्म जन्मांतर से मानव शुभाशुभ कर्मों एवं पुण्य पापमय संस्कारों का भार अपने स्कन्धों पर वहन करता हुआ आ रहा है। उन कर्मों और संस्कारों की निवृत्ति में षोडशकारण भावनाएँ साधन निमित्त बनती हैं, उपादान रूप में पुरुषार्थ करता है। साधन के प्रभाव से पुरुषार्थ द्वारा अन्ततः शिवपद, परमपद पा सकता है, जिससे जीवन धन्य-धन्य, कृतकृत्य हो सकता है, तत्पश्चात् और कुछ प्राप्त करने, जानने की आकांक्षा, अभिलाषा शेष नहीं रहती है। यथा कवि हृदय ने व्यक्त किया है-

वीतराग बन सदा ध्यान से, आतम को पावन करना।
मोक्षमार्ग में चलना मुनि बन, आतम का अनुभव करना।।
नहीं विषय में रमना निशदिन, समता में ही रम जाना।
ध्यान लगाकर कर्म खपाकर, शिवपद में है बस जाना ॥ १८२॥

प्रज्ञाशील मुनिवर की प्रज्ञापैनी दृष्टि में जीवमात्र का लक्ष्य मोक्षपद के द्वारा सिद्धात्म सुख को पाना है। इसकी सुन्दर अभिव्यक्ति काव्य में देखिए -

मात्र लक्ष्य में मोक्ष पहुँचना, नहीं विषय में भटकाना।
अनन्त जन्म के पाप गलाने, समकित पथ को अपनाना ।।
पुण्य रहा तो स्वतः विभूति, चरणन सेवा करती है।
भव विभूति को तजने वाले, को शिव रमणी वरती है ॥ १८८॥

मोक्ष पद पर आरुढ़ होने हेतु किन-किन सोपानों से होकर आगे बढ़ते हैं और अनन्त जन्मों के पाप कर्मों के क्षय के लिए किस प्रकार की कौन-कौन सी भावना भाते हैं, इस कृति में रचनाकार ने क्रमबद्ध दर्शाया है। मंगलाचरण में प्रथम काव्य मे ही ग्रंथ प्रतिज्ञा करते हुए बखान किया है-

सोलह कारण तीर्थ भावना, भाऊँ कर्म नशाने को।
यह 'तीर्थोदय काव्य' कहूँ मैं, भव सुख तज शिव पाने को ॥ १॥

उपसंहार में भी मनोभावों को व्यक्त करते हुए अध्यात्म धर्मी कवि वर्णित करते हैं कि -

सोलह कारण भावन से शुभ, रत्नत्रय निर्मल बनता।
मूल गुणों से उत्तर गुण में, बढ़ें मार्ग परिमल बनता ।।
शुभ से शुद्ध बने उपयोगी, मुनि चेतन में रम जाएँ ।
तीर्थोदय से मिले मोक्ष पद, उसी मोक्ष को हम जाएँ ॥ ६४०॥

तीर्थंकर पद किसे मिलता है, इस संदर्भ में काव्य अभिव्यंजना अभिदिष्ट है -

कैसे निकलें भव सागर से, दुखित हो रहे हैं प्राणी।
दुःख छूटे व मोक्ष शीघ्र हो, ऐसा सोचे जो ज्ञानी।।
वही जगत को सुखी चाहने, वाला जन उपकारी है।
उसे मिले वह तीर्थंकर पद, समवशरण अधिकारी है ॥ ३॥
नहीं लुभाता सम्यग्दृष्टि, जग विषयक उन वैभव से।
देव पदों व राज पदों से, ना आकर्षित हो भव से।।
प्राणों से भी अधिक कीमती, रत्नत्रय से प्रेम करे ।
तीर्थंकर पद मिले उसे ही, जो जन-जन का क्षेम करे ॥ ६३२॥

विश्व की चिन्तनशील और सृजनशील मनीषा ने हमें ज्ञान, साहित्य और श्रुत की वह सम्पदा पूर्वाचार्यों के माध्यम से सौंपी है, जिसमें अवगाहन कर हम अपने जीवन और जगत के साथ अतीत के अथाह सागर को भी किसी न किसी दृष्टि में, कुछ न कुछ अंश रूप में ज्ञात कर लेते हैं। ज्ञान मनुष्य के बौद्धिक विकास के लिए है। जीवन आचरण में विनय, आस्था, श्रद्धा, शिष्टाचार और शालीनता लाने के लिए है। अपनी ज्ञानमय प्रस्थिति बनाये रखने में 'तीर्थोदय काव्य' सुरभिमय, संगीतमय 'शंखनाद' है। पूज्य मुनिवर ने सांसारिक भोगों को निर्मल मन से तिलांजलि देकर भव सुख का पूर्ण निषेध किया है। आध्यात्मिक चिन्तन को ही सच्चा सुख मानकर इसी में पूर्ण निरत रहते हैं। तीस वर्ष की अल्पायु में तमिलनाडु के ग्राम कन्नलम में षोड्शकारण पर्व के दौरान वी.नि. संवत् २५२५ में रचना रचकर अप्रतिम प्रतिभा, अपरिमित ज्ञान का अप्रतिम परिचय दिया है।

जिस प्रकार सरिता स्त्रोत से प्रारम्भ होकर क्रम-क्रम से विस्तार करती हुई अनेकशः जल प्रवाहों को अपने अंक में समाहित कर विराट अथाह सागर रूप परिणत हो जाती है, उसी प्रकार 'तीर्थोदय काव्य' विशिष्टतः मंगल भूमिका से प्रारम्भ होकर मन में सम्यक्त्व के बीज का वपन मोक्ष महल को सुदृढ़ करने की दृष्टि से २३ उपशीर्षकों में समीचीन दृष्टि, मोक्ष द्वार हेतु २३ उपशीर्षकों में सम्यक्वृत्ति, १२ उपशीर्षकों में

विमोचन दृष्टि, १३ उपशीर्षकों में सद्भक्ति, ६ उपशीर्षकों में समुन्नति, ग्रंथ उपसंहार सिद्धात्मा, षोडशकारण व्रत की विधि, षोडश भावना सार, उद्देश्य, अंतिम मंगल और प्रशस्ति मार्ग से प्रवाहित होती हुई सार्थक भावना अनुपम लक्ष्य को प्राप्त होती है।

भाषा भावों के प्रस्फुटन का अनुगमन करती है। भाषा मानव समाज के लिए ही नहीं वरन् समाज और देश, काल तक की मूर्छा को तोड़ने में समर्थ होती है। भाषा की खोज अमृत की खोज से कम नहीं है, क्योंकि लेखक की नियति अ से अः स्वर क से ज्ञ व्यंजन तक भाषा से बँधी है। भाषा लेखक के लिए जन समाज में बोलने का ही एक निमित्त है। भाषा सम्बन्धों की सबसे प्रामाणिक तुला है। व्यक्ति की सोच, विचार, संवेदना, अनुभूतियों का अनुभव को आकार देना ही भाषा का कार्य है। संवेदना के धरातल पर अनुभवों को भाषा में परिणत करने की प्रक्रिया ही किसी लेखक को उस पार तक ले जाती है, जहाँ अमृत का अगाध भण्डार है। 'तीर्थोदय काव्य' की भाषा शैली उत्कृष्ट है, पढ़ते-पढ़ते ऐसा विदित होता है कि सरिता के प्रवाहवत् भावों की भाषा शुद्ध खड़ी बोली हिन्दी है, जिसमें मधुरता, बोधगम्यता, हृदयस्पर्शी, प्राकृतिक सौन्दर्य, तत्सम तथा तद्भव शब्द विद्यमान हैं। जिनवाणी मंगल पद्य इसी श्रृंखला में दृष्टव्य है -

सदा भारती, जगत तारती, जिनवाणी मंगलकारी।
मोक्षमार्ग में जिन सेवक को, सदा रही संकटहारी।।
गंध सहित उन पुष्पों पर ज्यों, भ्रमर नृत्य करते संगीत।
अनेकांतमय जिनवाणी के, शिव पाने मैं गाऊँ गीत ॥ ४॥
सदा दिगम्बर अम्बर त्यागी, जंगल में जो वास करें ।
विषय वासना दूर भागती, क्योंकि चेतन वास करें ॥ ४७८॥

शेष अंगले अंक में ....

सल्लेखना	आत्मघात
1. समता पूर्वक	1. कषाय प्रेरित
2. आत्मा की अमरता को समझ कर आत्म कल्याण की भावना से	2. देहोच्छेद को ही स्वविनाश मानकर
3. जीवन के अन्त समय में मरण के अपरिहार्य होने पर	3. जीवन के किसी भी क्षण में
4. सल्लेखना का ध्येय मरण की योग्य परिस्थितियों के निर्मित होने पर अपने सद्गुणों की रक्षा का है।	4. केवल मरण का लक्ष्य
5. परम उत्साह, निर्भीकता, वीरता का सद्भाव	5. दीनता, भीति और उदासी के परिणाम
6. आत्म कल्याण की भावना और निष्ठापूर्वक	6. जीवन के प्रति अत्यधिक निराशा और तीव्र मानसिक असंतुलन।

जैन चित्रकला की वैज्ञानिकता

- डॉ. रोली व्यवहार, जर्मनी

जैन धर्म अहिंसक जीवन पद्धति से जीने का संदेश देता है इसलिए यह धर्म प्रकृति के अधिक निकट लगता है। यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि जैन धर्म में कहीं भी प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन नहीं किया गया। प्रत्येक प्राणी अपने आपको सत् पथ पर लगाकर अपना जीवन उत्कर्ष कर सकता है । नर से नारायण बन जाने की पूरी क्षमता उनके भीतर निहित है किन्तु विषय-वासनाओं और पाप-वृत्तियों को अंगीकार करता है तो स्वयं ही पतन के गर्त में गिरता चला जाता है। यह सब अर्जित कर्म के माध्यम से स्वमेव होता रहता है और इस चक्र के बीच किसी अन्य शक्ति के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता जैन धर्म स्वीकार नहीं करता है।

जैन कला में भी उपर्युक्त कथन का दिग्दर्शन होता है। सभी कलाओं में चित्रकला का स्थान अद्वितीय है। यह एक ऐसी लिपि है जिसे समझने के लिये किसी अक्षर ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती, अतः एक अनपढ़ व्यक्ति भी चित्र को आसानी से समझ सकता है। चित्रकला मानव की अनुभूतियों को चाक्षुष बनाने का एक शक्तिशाली विज्ञान है। इस कला के विज्ञान द्वारा गूढ़ से गूढ़ भावों को भी सरलता से अभिव्यक्त किया जा सकता है।

विज्ञान का संबंध विशेष ज्ञान से है इसीलिए चित्रकार के विशेष ज्ञान से निर्मित चित्र में भी विज्ञान है। उसके विशेष ज्ञान में रेखाओं, रंगों के संयोजन के सिद्धांतों आदि के साथ ही प्रतीक का ज्ञान भी अति आवश्यक है क्योंकि प्रतीक का विषयानुसार प्रयोग नहीं करने से विषय ही परिवर्तित हो सकता है। जैसे भगवान महावीर का लांक्षन चिन्ह सिंह है। यदि चित्र में सिंह के स्थान पर वृषभ अंकित कर दिया जाए तो वह चित्र ऋषभदेव भगवान के रूप में पहचाना जाएगा इसीलिये चित्रकला में प्रतीकों के अंकन में पूर्ण सावधानी रखना पड़ती है। गूढ़ भावों को अभिव्यक्त करने में प्रतीक का बहुत महत्व होता है। जैन चित्रकला धर्म से संबंधित होने के कारण अधिक सुन्दर प्रतीत होती है जिसमें नैतिक उत्कर्ष को बहुत महत्व दिया गया है। जैन चित्रकला का उद्देश्य सदा ही उच्च रहा है।

जैन चित्रकला की प्राचीनता के प्रमाण अनेक साहित्यिक साक्ष्यों से मिलते हैं, इसके प्राचीन चित्रित प्रत्यक्ष उदाहरण भित्ति चित्रों तथा पोथी चित्रों में बड़ी संख्या में उपलब्ध हुए हैं। ग्यारहवीं शताब्दी तक जैन भित्ति चित्रकला का पर्याप्त विकास हुआ जिनके उदाहरण जोगीमारा (2 री शताब्दी ई.पू.) सित्तन्नवासल (7 वीं शता.) एलोरा (9 वीं- 11 वीं शता.) से मिले हैं। उसके बाद भी यह प्रथा जीवित रही जिसके लिये हम जिनकांची (तिरूपरूत्तिकुण्रम्), मुनिगिरी जैसे प्राचीन मन्दिरों तथा श्रवणबेल्गोल और मेलसित्तामूर जैसे प्राचीन मठों को उदाहरण रूप प्रस्तुत कर सकते हैं। पोथी चित्रों की परम्परा भी प्राचीन है परन्तु उसके प्रमाण

हमें ग्यारहवीं शताब्दी से उपलब्ध होते हैं।

कला का विज्ञान से घनिष्ट संबंध होता है। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि विज्ञान का दृश्य रूप कला के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। जैन चित्रकला भी पूर्णतः गणित विज्ञान मनोविज्ञान एवं परा मनोविज्ञान पर आधारित है। जहाँ बाह्य आकार-प्रकार को प्रदर्शित करने हेतु गणित विज्ञान का सहारा जैन कलाकारों ने लिया वहीं आंतरिक सुन्दरता अर्थात् भाव आदि को प्रकट करने के लिये मनोविज्ञान का सहारा लिया। प्रत्येक कृति में सत्यं, शिवं, सुन्दरं का होना आवश्यक होता है। जिसमें इन तीनों का समावेश होता है वही कृति उत्कृष्ट होती है और जैन चित्रकला में विज्ञान का सहारा लेते हुए इन तीनों तत्वों का समावेश किया गया है जिससे जैन चित्रकला परिष्कृत होती रही और उसने भारतीय कलाओं के बीच अपना एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया।

जैन चित्रकला में विज्ञान की संयोजना और उसके सिद्धांतः जैन चित्र के निर्माण हेतु अर्थात् संयोजन हेतु तीन गणितीय नियम होते हैं।

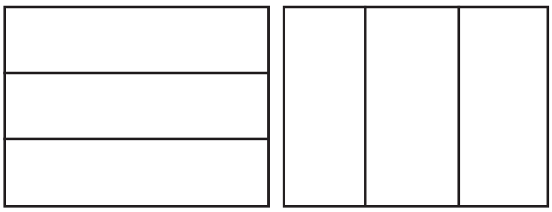

1. **क्षैतिजाकार या ऊर्ध्वाकार** – इसमें विषय-वस्तु को क्षैतिज आकार में या ऊर्ध्वाकार में संयोजित किया जाता है। जैन चित्रकला में इस सिद्धांत के द्वारा चित्रण किया गया है।

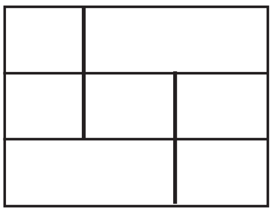

2. **क्षैतिज-ऊर्ध्वाकार** – इस सिद्धांत के अंतर्गत् चित्र की विषय वस्तु को क्षैतिज आकार में और ऊर्ध्वाकार में संयोजित किया जाता है जिससे चित्र अधिक सुन्दर बन जाते हैं। जैन चित्रों में इस सिद्धांत का खुलकर पालन किया गया है।

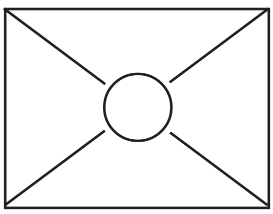

3. **केन्द्रीकरण** – इसमें चित्र के प्रधान विषय को मध्य में अर्थात केन्द्र में महत्व देकर चित्रित करके चारों ओर विषय-वस्तु की आवश्यकतानुसार अन्य सामग्री का संयोजन किया जाता है। इस सिद्धांत के प्रयोग से चित्र आकर्षक बन जाते है क्योंकि इस तरह के संयोजन में लय का अधिक समावेश होता है। जैन चित्रकारों ने इस सिद्धांत के द्वारा सुन्दर चित्र निर्मित किये हैं।

इन तीनों सिद्धांत में अनुपातानुसार वस्तु का यथा-स्थान अंकन आवश्यक होता है जिसके लिये गणित विज्ञान का सहारा लिया जाता है । प्रधान वस्तु को कितने अनुपात में अंकित करना है उसके अनुसार

अन्य वस्तु का क्या अनुपात होगा आदि के लिये गणितीय विज्ञान का प्रयोग किया जाता है।

जैन पोथीचित्रों में मानवाकृतियाँ सामान्यतः 4½, 5½, 6½ एवं 7 के अनुपात में विभाजित करके बनाई गई हैं और जो आकृतियाँ 5½, से 7 के अनुपात में चित्रित की गई हैं, वे अधिक सुन्दर प्रतीत होती हैं। साधारण मनुष्यों, राजाओं एवं देवताओं के अनुपात में माप का अंतर ही उनकी गरिमा को रेखांकित करता है। जैन पोथी में प्राप्त एक चित्र में देवी आसिया को संपूर्ण अंतराल में विशाल रूप में चित्रित किया गया है, जबकि उनके समक्ष अंकित उपासकों को लघु आकृति में अंकित किया गया है जिससे देवी की शक्ति का अंदाजा लगाया जा सकता है । यह समाज विज्ञान का समर्थ प्रतीक है।

सामान्यतः जैन चित्रों में सम्मानीय व्यक्तियों को अधिक ऊँचे सिंहासन में विराजित दर्शाया गया है जैसे एक चित्र में माता मरुदेवी पुत्र ऋषभदेव से अधिक ऊँचे सिंहासन में विराजमान है। चित्रकला में आकार एवं प्रमाण का बहुत महत्व होता है। जैन चित्रों में सभी प्रमाण या अनुपात गणित विज्ञान पर आधारित है। कोई आकृति कितनी बड़ी हो अन्य आकृतियों का क्या अनुपात हो आदि प्रमाण के अंतर्गत आते हैं। देवी ओसिया की आकृति अपने प्रमाण के कारण ही देवीत्व का प्रतीक बन गई है। डिविट् एच. पार्कर ने सुंदर रूप के छः कलात्मक एवं वैज्ञानिक सिद्धांत बताए हैं :-

1. **अवयव संगठन अथवा विविधता में एकता –** श्रेष्ठ कलाकृति हेतु विविधता में एकता होना आवश्यक है। विविधता का उद्देश्य दर्शक का कलाकृति में आकर्षण उत्पन्न करना व एकता का लक्ष्य समस्त पक्षों की ओर ध्यान दिलाने की शक्ति बढ़ाना है परंतु अधिक विविधता से उलझन हो सकती है।

2. **वस्तु –** कलाकृति की प्रतिपाद्य कथावस्तु आकर्षक एवं कल्याणप्रद होनी चाहिये। इस सिद्धांत का जैन चित्रकारों ने पूर्णतः पालन किया है। सामान्यतः नैतिक उत्कर्षता पूर्ण चित्र बनाये गये हैं।

3. **वस्तु वैविध्य –** मुख्य कथावस्तु को सरस बनाए रखने के लिये एवं कथाक्रम में विविधता लाने की दृष्टि से प्रासंगिक कथावस्तु का भी समावेश होना चाहिये।

4. **संतुलन –** कृति के सभी अंगों को अनुबिद्ध एवं समान महत्वपूर्ण बनाए रखने से संतुलन उत्पन्न होता है। चित्रकला में केन्द्र से चारों ओर समान भार का संयोजन संतुलन कहा जाता है।

5. **आनुगतिकता –** सभी घटनाएँ एवं व्यवस्थाएँ प्रधान वस्तु का अनुगमन करने वाली होनी चाहिये।

प्रधान वस्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण होनी चाहिये।

6. **विकास** – कृति में आरम्भ से अंत तक एक ही पद्धति का विकास होना चाहिये। कलाकृति का रोम रोम एक ही दिशा एक ही लक्ष्य की ओर इंगित करने वाला होना चाहिए। जैन चित्रकला में यथास्थान इन सभी कलात्मक एवं वैज्ञानिक नियमों का अनुसरण किया गया है।

चित्र में उत्पन्न एकरसता को विविधता से एवं उलझन को एकता से समाप्त किया जा सकता है जिससे चित्र में सौन्दर्य व्यक्त होता है। इसके लिये यह सूत्र प्रतिपादित किया गया है- सौंदर्य (B) = व्यवस्था (O) X संश्लिष्टता (C) (B = beauty, O = order, C = complexity) (B = oxc) or (B = O/C)

इस सूत्र के प्रयोग से चित्र में अधिक लयात्मकता उत्पन्न की जाती है और जहाँ लय होगी वहाँ सुंदर रूप का निर्माण होगा। प्रायः जैन चित्रों में यथास्थान इस वैज्ञानिक सूत्र के प्रयोग द्वारा लयात्मकता उत्पन्न की गई है।

रेखीय तकनीक – रेखा चित्र का आधार है, जिससे गति एवं स्थूलता प्रगट होती है। गति का संबंध वस्तु की क्रियाशीलता के साथ-साथ चित्र में रेखा के लयात्मक प्रवाह से भी है। चित्रकला रूप और रंग की कला है रूप का निर्माण रेखाओं से होता है अर्थात् चित्रकला में रेखा गणित का भी सहारा लिया जाता है। किसी भी चित्र में व्यक्ति एवं वस्तु का निर्माण रेखा-गणितीय आकार आयात, त्रिभुज, वृत्त, बेलनाकार आदि के द्वारा ही किया जाता है और ये सभी आकार रेखाओं के संयोग से बनते हैं। रेखाओं के अनेक दिशाओं में नियमन से भिन्न-भिन्न भाव प्रदर्शित होते हैं जैसे :-

1. आड़ी रेखा (——) : इससे निष्क्रियता और स्थिरता प्रदर्शित होती है। जैन चित्रकला में विश्रामावस्था के चित्र इसके अंतर्गत् आते हैं।
2. खड़ी रेखा (│) : इससे सक्रियता और गति का प्रदर्शन होता है। जैन चित्रों में पद्मासन एवं खङ्गासन आकृतियों से गति का बोध होता है।
3. वृत्त (◯) यह अनन्त ब्रह्माण्ड व संपूर्णता को प्रदर्शित करता है। जैन चित्रकला में तीर्थंकर, माता, साध्वियों के पृष्ठ का आभामण्डल उनकी संपूर्णता एवं श्रेष्ठता का सूचक है।
4. ऊर्ध्वमुखी त्रिभुज : (△) इससे ऊर्ध्वविकास का प्रदर्शन होता है।
5. अधोमुखी त्रिभूज : (▽) इससे अधोगति का प्रदर्शन होता है । अधोमुखी त्रिभुज और ऊर्ध्वमुखी त्रिभुज के प्रभाव को मनुष्य आकृति द्वारा इस समीकरण से समझा जा सकता है।

मनुष्य आकृति अधोमुखी त्रिभुज (चरण की ओर) एवं ऊर्ध्वमुख त्रिभुज (मुख की ओर) के संयोग से बनती है। इस समीकरण में अधोमुखी त्रिभुज मन के विकारों के माध्यम से मनुष्य के पतन का प्रतीक है

और ऊर्ध्व मुख आकृति सदाचार तथा सह अस्तित्व आदि मानवीय गुणों के माध्यम से मनुष्य के विकास का सूचक है। संतों और भगवन्तों की आकृतियों में अधोमुखी रेखाएँ, उनकी ऊर्जा की अंतर्मुखी संयोजना को इंगित करती है और ऊर्ध्व मुखी रेखाएँ उनकी साधना की सफलता को व्यक्त करती हैं और यही वीतराग अवस्था जैन चित्र विज्ञान का प्रमुख आधार तत्व है।

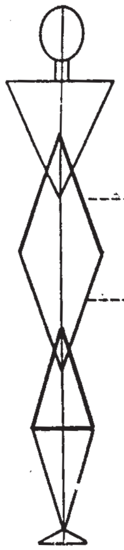

जैन चित्रकला में मानवाकृति एवं अन्य पहलुओं के निर्माण हेतु रेखीय तकनीक का सुन्दर प्रयोग किया गया है। जैन भित्ति चित्रकला जोगीमारा, सितन्नवासल, एलोरा के प्रारंभिक चित्रों में एवं प्रारंभिक ताड़पत्रीय ग्रन्थ चित्रों में प्रवाहपूर्ण गोलाईयुक्त रेखाओं का प्रयोग किया गया है। इससे चित्र में अधिक लयात्मकता आ गई है और चित्र बहुत आकर्षक प्रतीत होते हैं साथ ही इनके द्वारा कोमलता के भाव प्रदर्शित किये गये हैं जबकि पश्चात् कालीन एलोरा एवं पोथी चित्रों में कोणीय रेखाओं का अधिक प्रयोग दिखाई पड़ता है। चित्रकार भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार की रेखाओं के माध्यम से कोमलता और कठोरता, विकार और निर्विकारता, समता और विषमता तथा क्रोध और क्षमा जैसे परस्पर विरुद्ध भावों की अभिव्यक्ति करता है, यह तूलिका पर उसके नियंत्रण का ही खेल है। विशेष रैखीय तकनीक एवं चित्रों के भाव - भंगिमा का यही क्रम जैन चित्रकला का विज्ञान है।

जैन चित्रों में रंग विज्ञान-योजना : चित्रकार रंग को सौंदर्य का तत्व और मनोवेग पर पड़ने वाले प्रभाव मानता है। रूप की अनुभूति रंग की अनुभूति से किसी न किसी तरह भिन्न होती है। रूप का ज्ञान एक प्रयास का फल है अतः रूप की अनुभूति बुद्धिजन्य है और रंगानुभूति रेटिनल नाड़ियों की संवेदनशीलता से होती है।

रेखा से रूप को स्पष्टता और गति प्राप्त होती है, रंग रूप को और अधिक खुलापन एवं स्पष्टता देते हैं जिससे चित्र सार्थक बन जाते हैं। मुख्य रंग तीन माने गए हैं पीला, लाल और नीला। मुख्य रंगों के सम्मिश्रण से जो रंग प्राप्त होते हैं वे द्वैतीयक रंग माने जाते हैं-

जैसे - पीला + लाल = नारंगी   लाल + पीला = बैगनी   नीला + पीला = हरा

मुख्य रंग और द्वैतीयक रंगों के किसी भी प्रकार के मिश्रण से प्राप्त रंग मिश्रित रंग माने गए हैं।

जैन चित्रकारों द्वारा प्रयुक्त रंगों की निर्माण विधि का विस्तृत विवरण विद्वान मोतीचंद्र ने अपनी पुस्तक "The miniature painting from western India," में प्रस्तुत किया है। रंग प्रायः वनस्पति और खनिज तत्वों से बनाये जाते थे इससे यह प्रमाणित होता है कि ये कलाकार वनस्पति विज्ञान और खनिज

विज्ञान से भी परिचित होते थे। वे रंगों के निर्माण हेतु निश्चित ही गणित विज्ञान का सहारा लेते होंगे क्योंकि असमानुपातिक मिश्रण से सही और प्रभावक रंग का निर्माण नहीं किया जा सकता है।

जैसे वैज्ञानिक एक रंग मानते हैं, श्वेत रंग। श्वेत रंग के सिवाय सभी रंग श्वेत रंग के ही खण्ड होते हैं इसीलिये प्रिज्म के टुकड़े से जब सूरज की किरण गुजरती है तो सात रंग में बट जाती है। सूरज की किरण सफेद है लेकिन हवा में उपस्थित जल कण के कारण इन्द्रधनुष पैदा होता है। राग शब्द का अर्थ रंग होता है विराग का तात्पर्य रंग के बाहर जाना अर्थात् श्वेत रंग अपनाना होता है। वीतरागता का अर्थ रंग का अतिक्रमण कर जाना होता है अतः वैज्ञानिक जो एक रंग मानते हैं श्वेत रंग, वह शान्त शीतल रंग माना जाता है जिससे शांत भाव जागृत होते हैं। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि काला वर्ण सूर्य की तेज किरणों को संशोषित करता है और श्वेत रंग उन किरणों को अपने भीतर प्रवेश करने नहीं देता, इसी प्रकार कलुषित भावना वाला श्याम वर्णी व्यक्ति तीव्र हिंसात्मक भाव ग्रहण करता है। शुभ प्रकृति का श्वेत लेश्या वाला व्यक्ति शान्त भाव ही अपनाता है वह हिंसात्मक प्रकृति वालों के भाव को अपने भीतर प्रवेश होने नहीं देता है।

हमारे छोटे-छोटे कृत्य में हमारी लेश्या प्रकट होती है। अब इसके वैज्ञानिक आधार भी मिल गए हैं। महावीर भगवान कहते हैं कि जिस व्यक्ति के मन में हिंसा के भाव सरलता से उठते हैं उसके चेहरे के पास एक काला वर्तुल रहता है। जैसे-जैसे दृष्टि साफ होने लगती है वैसे-वैसे व्यक्ति के पास आने पर तत्क्षण उसके चेहरे के आस-पास विशिष्ट रंगों का वर्तुल दिखाई पड़ता है। यही बात सोवियत रूस के किरलियान ने फोटोग्राफी के विकास में सूक्ष्मतम् कैमरे विकसित करके सिद्ध कर दी है। उन्होंने यह खोज निकाला है कि जैसे व्यक्ति के भाव होते हैं ठीक वैसा आभामण्डल उसके मस्तिष्क के आसपास होता है। जैन चित्रकला में इस रंग विज्ञान का सुन्दर प्रयोग षट्लेश्या के अंकन में किया गया है।

जैन चित्रकला में षट्लेश्या के अंकन में भिन्न-भिन्न भावना वाले व्यक्ति को भिन्न-भिन्न रंग में दर्शाया गया है। सर्वाधिक हिंसक भावना रखने वाले व्यक्ति को अशुभ काले वर्ण का दर्शाया है तदनुसार हिंसक भावना में जैसे-जैसे कमी आती गई उनके वर्ण में परिवर्तन होता बतलाया गया है। सर्वाधिक शुभ भावना वाले व्यक्ति को शुभ श्वेत वर्ण में दर्शाया गया है। छहों लेश्याएँ इस प्रकार की होती हैं-

1. कृष्ण लेश्या (भौंरे के समान काले वर्ण की) - दूसरे का अपरिमित विनाश करने की भावना कृष्ण लेश्या है।
2. नील लेश्या (नीलम के समान वर्ण की) - दूसरे के विनाश को थोड़ा सीमित कर लेना नील लेश्या है।
3. कपोत लेश्या (कबूतर के समान वर्ण की) - अपनी आवश्यकता से तौलकर दूसरे को उससे कई गुनी हानि पहुँचाने का विचार कपोत लेश्या है।
4. पीत लेश्या (स्वर्ण के समान पीत वर्ण की) - अपनी आवश्यकता पर पर्यावरण का बिना विचारे विनाश करना पीत लेश्या है।

5. पद्म लेश्या (कमल के समान वर्ण की) - अपनी आवश्यकता से अधिक जरा भी व्यर्थ विनाश नहीं करना पद्म लेश्या है।

6. शुक्ल लेश्या (शंख के समान वर्ण की) - पर्यावरण में जड़ और चेतन किसी को कोई हानि पहुँचाए बिना जीने का संकल्प शुक्ल लेश्या है।

उपर्युक्त लेश्या विज्ञान चित्र में सर्वाधिक कलुषित भावना वाला काले रंग का व्यक्ति फल प्राप्त करने के लिए कुल्हाड़ी से संपूर्ण वृक्ष काट रहा है, नीले रंग का व्यक्ति वृक्ष की एक मोटी शाखा तोड़ रहा है, कबूतर जैसे रंग का साँवला व्यक्ति फलों से लदी हुई छोटी शाखाएँ तोड़ने का प्रयत्न कर रहा है, एक पीली आभा वाला व्यक्ति फलों के गुच्छे तोड़ रहा है, कमल के समान उज्जवल वर्ण का व्यक्ति केवल पके-पके फल तोड़ने का प्रयास कर रहा है। अंत में शान्त प्रकृति का गोरा व्यक्ति वृक्ष के नीचे झड़े हुए फलों में से अपने लिये पके फल बीन रहा है। वह अपना पेट भरने के लिये वृक्ष के एक पत्ते को भी नहीं छूना चाहता है। एक शुक्ल लेश्या का प्रतीक है। कृष्ण, नील व कपोत ये तीन लेश्याएँ अशुभ लेश्याएँ हैं, क्योंकि इनमें अपने छोटे से स्वार्थ के लिये दूसरों को अधिक हानि पहुँचाने का संकल्प दिखाई पड़ता है। पीत, पद्म और शुक्ल शुभ लेश्याएँ मानी गई हैं क्योंकि इनमें उत्तरोत्तर जड़ और चेतन की विशुद्धतर प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

वृक्ष के पास काटने के भाव से कुल्हाड़ी लेकर जाने पर वृक्ष काँप जाता है। शरीर के यंत्र तार से खबर देते हैं परन्तु यदि काटने के भाव नहीं है हाथ में कुल्हाड़ी लेकर जाने से वृक्ष नहीं काँपता है। तात्पर्य यह है कि काटने के भाव ही वृक्ष को संवादित करते हैं। जिस आदमी ने कभी वृक्ष नहीं काटे बल्कि हमेशा जल खाद उनको दिया है उसके पास जाने से वृक्ष हर्षित हो उठते हैं। वैज्ञानिक भी इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि एक वृक्ष को काटने पर बगीचे के सारे वृक्ष काँप जाते हैं और एक वृक्ष को पानी दो तो सारे वृक्ष प्रफुल्लित हो उठते हैं। अतः व्यक्ति को सर्वप्रथम कृष्ण लेश्या का पर्दा उठाना चाहिए ताकि उसे आत्म दर्शन हो सके। फिर छठवीं लेश्या को अपना लक्ष्य बनाना चाहिये।

कर्म, अल्पतम कर्म सिद्धांत के वैज्ञानिक नियम पर आधारित होता है। जो जीव जितना अधिक कषाय युक्त कर्म करेगा वह उतना ही अधिक इस संसार के कर्म-बंधन में बँधता जायेगा। जीव अल्पतम योग कषायों और अनुकम्पा आदि कर्मों के द्वारा वीतराग की अवस्था तक को विशुद्धि द्वारा प्राप्त कर सकता है।

क्रमशः ....

जैन संस्कृति की रक्षा व विकास में नारी की भूमिका

- डॉ. सीमा जैन

प्रस्तावना – जैन संस्कृति की रक्षा व विकास में नारी का क्या योगदान रहा है? यह जानने से पूर्व यह समझना आवश्यक है कि जैन संस्कृति क्या है? ''संस्कृति'' को ''संस्कार'' शब्द के द्वारा अच्छी तरह समझा जा सकता है। संस्कार से तात्पर्य व्यक्ति या वस्तु को शुद्ध करना अथवा उसके अंदर विद्यमान गुणों/ आंतरिक प्रकाश को परिष्कृत करना। संस्कार मानसिक व आध्यात्मिक होते हैं। जब हम किसी मनुष्य के बारे में कहते हैं कि वह सुसंस्कृत है तो हमारा अभिप्राय उसकी बाह्य बातों से न होकर मन और आत्मा के भावों की उन्नति से होता है कि उसका मन और आत्मा कितने उज्जवल भावों को अंगीकार कर चुके हैं। इस प्रकार संस्कृति मानव का आंतरिक गुण है।

अहिंसा प्रधान जैन संस्कृति – जैन संस्कृति से अभिप्राय अहिंसा मयी संस्कृति से है जिसमें प्रमुखतः शामिल है- पानी छानकर पीना, रात्री भोजन न करना, सच्चे देव शास्त्र गुरु की वन्दना करना, तीन मकार यथा मद्य, मांस, मधु, पाँच उदम्बर - बड़, पीपल, ऊमर, पाकर, कठूमर का त्याग करना।

जैन धर्म की अहिंसा अन्य धर्मो की अहिंसा से भिन्न है जैसे बौद्ध धर्म में बताया है कि यदि कोई दान में मांस आदि दे तो वह ग्रहण किया जा सकता है परंतु जैन धर्म में बताया है कि कृत, कारित, अनुमोदना किसी भी तरह से हिंसा न करना ही अहिंसा है। इस प्रकार जैन संस्कृति अहिंसा प्रधान संस्कृति है।

इतिहास ऐसी नारियों की गाथाओं से भरा पड़ा है, जिन्होंने जैन संस्कृति की रक्षा के लिये उसके प्रचार-प्रसार के लिये अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया । नारी अपने धर्म और कर्तव्य निष्ठा के लिये जीती है। वह महाव्रतादि के अनुष्ठान द्वारा आर्यिका जैसे महत्तर पद का पालन करती हुई अपने ज्ञान से अपना एवं लोक का कल्याण करती रही है।

नवधा भक्ति – जैन संस्कृति की रक्षा व विकास में नारी ने सर्वप्रथम महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है श्रमणों को आहार दान देकर। नारी द्वारा अहिंसक शुद्ध सतत् आहार दान देने की ये परम्परा प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ के समय से लेकर आज तक चली आ रही है। नारी मुनि को परमेष्ठी मानकर, नवधा भक्ति पूर्वक शुद्ध आहार जल की व्यवस्था करती है और श्रमणों के मोक्ष मार्ग की राह में सहायक बनती है। इसी प्रकार नारी जैन संस्कृति की रक्षा व विकास में अप्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नारी का भक्ति भाव एवं उसकी धर्म के प्रति आस्था- नारी के भक्तिभाव एवम् धर्म के प्रति प्रगाढ़ आस्था के अनेक उदाहरण देखने मिलते हैं जहाँ नारियों ने अनेक भूले-भटके प्राणियों को धर्म के मार्ग पर लगाया और जिन धर्म की प्रभावना की।

बौद्ध धर्मानुयायी राजा श्रेणिक की पत्नि रानी चेलना जो जैन धर्म की उपासक थी उन्होंने न केवल अपने पति को जैन धर्म के मार्ग पर चलाया वरन् अपनी आस्था के माध्यम से यह सिद्ध कर दिया कि जैन

धर्म ही मोक्षमार्ग की सच्ची सीढ़ी है।

राजकुमारी अनन्तमति की कथा द्वारा सम्यक् दर्शन के निःकांक्षित अंग की महत्ता पर प्रकाश डाला गया है कि किस प्रकार विद्याधर द्वारा उनका अपहरण कर उन्हें जंगल में छोड़े जाने पर उन्होंने बार-बार अपने शील धर्म की रक्षा एक अकेले जिनधर्म की शरण द्वारा की और सारे जगत् को ये संदेश दिया कि जिनधर्म ही सच्ची शरण है। जिन धर्म से ही व्यक्ति सर्वोच्च पद को पा सकता है। इस प्रकार उन्होंने समस्त लोगों को धर्म में स्थिर रहने और आकांक्षाओं के प्रति निःकांक्षित बने रहने की प्रेरणा दी।

रेवती रानी की धर्म के प्रति दृढ़ श्रद्धा और अमूढ़दृष्टि से यह सिद्ध कर दिया कि आगम में लिखी बातें सच हैं जो उन पर अविश्वास करता है वह मिथ्यादृष्टि है। देव शास्त्र और गुरु का सच्चा श्रद्धान करने वाला कभी भी बाह्य चमत्कारी बातों से प्रभावित नहीं होता है। इस प्रकार उन्होंने जैन संस्कृति/धर्म का आदर्श व वास्तविक स्वरूप लोगों के सम्मुख रखा।

महासती सीता का जब रामचन्द्र जी ने लोकापवाद के भय से त्याग किया था तब सीता जी ने रामचन्द्र जी को संदेश भिजवाया था कि जिस प्रकार उन्होंने मेरा त्याग किया है उस तरह वे धर्म का साथ कभी न छोड़े और जब उनकी अग्नि परीक्षा ली गई थी तब उन्होंने समस्त जन समूह के सामने यह प्रतिज्ञा की कि यदि मैंने मन, वचन और काय से रघु को छोड़कर स्वप्न में भी किसी अन्य पुरुष का चिंतन किया हो तो मेरा यह शरीर अग्नि में भस्म हो जाये, अन्यथा नहीं। सती साध्वी होने के कारण वह उसमें से खरी निकली। सीता जी समस्त नारी वर्ग के लिये एक आदर्श प्रस्तुत कर गई कि यदि जिन धर्म में व्यक्ति की सच्ची श्रद्धा है तो अन्य बाह्य उपसर्ग उसका बाल भी बाँका नहीं कर सकते। जिन धर्म को अंगीकार करने पर ही व्यक्ति मुक्ति पद प्राप्त कर सकता है। सीता जी ने पृथ्वीगति आर्यिका से दीक्षा ली और स्त्री पर्याय छेद कर स्वर्ग में प्रतीन्द्र पद प्राप्त करके जैन धर्म की प्रभावना की। इस प्रकार अपने सतीत्व द्वारा समाज को शक्ति प्रदान की एवं वीर बालक दिये।

महासती मैनासुन्दरी ने समस्त जगत् के सम्मुख ये सिद्ध कर दिया कि जिन धर्म के द्वारा असाध्य रोग भी मिनटों में दूर हो सकता है। उन्होंने अपने कोढ़ी पति एवं 700 व्यक्तियों का कोढ़ सिद्ध चक्र मण्डल विधान सम्पन्न कराकर भगवान का अभिषेक कर गन्धोदक द्वारा दूर कर दिया और जैन धर्म की प्रभावना करके धर्म की रक्षा की साथ ही उसे पुष्पित किया।

धर्म के दस लक्षणों द्वारा जैन संस्कृति का नारी द्वारा संरक्षण – जैन नारी ने पति, पुत्र भाई सबको करुणा का भाव सिखाया और धर्म के दस लक्षणों यथा, क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, अकिंचन्, ब्रह्मचर्यादि को सुरक्षित रखा। नारी बचपन में अपने बच्चों में यह संस्कार डाल देती है कि पेड़ पौधे मत तोड़ो इनमें भी जान है। चींटी, मच्छर, मक्खी आदि छोटे-छोटे जीवों को मत मारो, उन्हें भी दर्द होता है, उनको भी अपने प्राण प्रिय होते हैं। पानी छानकर पीना, अभक्ष्य का सेवन न करना जैसे संस्कार

नारी बचपन में ही अपने बच्चों में डालकर जैन संस्कृति को सुरक्षित रखे हैं । इसी प्रकार सामुद्रिक मछलियों, वन्य पशु-पक्षियों को जीवन दान देकर पर्यावरण को सुरक्षित रखने में प्रेरणा देने में सहायक हुई है। वे अपने संबंधियों को ऐसे रोजगार/धन्धे करना वर्जित करती हैं जहाँ अहिंसा धर्म का पालन न हो सके, किन्तु जहाँ देश रक्षादि का प्रश्न आता है वहाँ वह वीरता का अनुसरण करने के लिये उत्साहित करती हैं । उच्च से उच्चतम ज्ञान प्राप्त करने, कराने तथा शास्त्र दान आदि के द्वारा सांस्कृतिक संरक्षण भी करती रही हैं। झूठ, दम्भ एवं दर्प से वह हमेशा दूर रही है और परिवार में अभिमान को वर्जित करती रही है। कुटिलता का आवरण दूर कर स्वच्छ वातावरण का निर्माण भी नारी ने किया है। नारी की प्रेरणा से ही दिगम्बर जैन समाज ने असीम परिग्रह जोड़ने की भावना का त्याग किया है। इस प्रकार उसने कमाई के जरिये को विशुद्ध रखकर एक बड़ी भूमिका निभाई है।

मंदिर, वसतिका, गुफा आदि के निर्माण, संरक्षण व विकास में नारी भूमिका - यदि भारतीय इतिहास को उठाकर देखें तो ज्ञात होगा कि पूर्व कालीन नारी अपने साहित्य सृजन द्वारा किस प्रकार जैन संस्कृति को सुरक्षित करती है। ऐसे अनेकों उदाहरण पुराण ग्रंथों में उपलब्ध हैं। अनेक शिला लेखों में भारतीय जैन नारियों द्वारा रचित लेख उत्कीर्ण हैं, जिनके माध्यम से जैन धर्म की प्राचीनता का पता चलता है व नारियों द्वारा धर्म की रक्षा व विकास के लिये किये गये कार्यों का उल्लेख भी मिलता है।

कलिंगाधिपति राजा खारवेल की रानी ने एक गुफा में निम्न लेख उत्कीर्ण कराया था।

- अरहंत पसादान (म्) कालिंगा (न) म् समणानम्........

सोन्दत्ति लेख नं. 160 में उत्कीर्ण है कि रानी चांदकव्वे ने, जो जिन धर्म उपासिका थी, एक जिन मंदिर का निर्माण कराया और 150 महत्तर भूमि रानी ने व्याकरणाचार्य बाहुबली देव को प्रदान की।

विष्णु वर्धन की रानी पट्टमहादेवी शांतला ने सन् 1123 में गंध वारण वसति बनवाई। ये जैन धर्म में सुदृढ़ आस्था वाली नारी थीं। आज भी कर्नाटक में इनका बनवाया एक मंदिर है।

सोदे के राजा की रानी ने, कारण वश पति के धर्म परिवर्तन कर लेने के बाद भी पति की असाध्य बीमारी के दूर होने तथा अपने सौभाग्य को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये अपने नासिका भूषण को, जो मोतियों से बना था, बेचकर एक जैन मंदिर बनवाया था।

होयसल नरेश बल्लाल, बल्लाल द्वितीय के मंत्री चंदमौलि वेदानुयायी ब्राह्मण थे। परंतु उनकी पत्नी 'आचियक्क' जिन धर्म परायणा थीं उन्होंने बेलगोल में पार्श्वनाथ वसति का निर्माण कराया था।

राजा चामुण्डयराय ने विश्व प्रसिद्ध भगवान बाहुबली की प्रतिमा का निर्माण करवाया था जो अपने सौम्यता, वैराग्य और सुन्दरता का अनूठा मिश्रण है लेकिन इस प्रतिमा को बनवाने का पूरा श्रेय उनकी माता को जाता है। माँ बाहुबली के दर्शन की इच्छा को पूर्ण करने के लिये ही चामुण्डराय ने इस मूर्ति का सृजन करवाया था। चामुण्डराय की माँ ने दिगम्बर जैन संस्कृति की प्राचीनता को सिद्ध करने का एक बहुत बड़ा

सबूत संसार को दिया और हमारी जैन संस्कृति की रक्षक बनी। इस तरह मध्य युगीन नारियों ने अनेक आयागपट्ट, मंदिर, मूर्ति आदि का निर्माण कराकर जैन संस्कृति को सुरक्षित रखा।

जबलपुर में पिसनहारी की मढ़िया के नाम से प्रसिद्ध एक जैन मंदिर है। जिसे एक जैन महिला ने आटा पीस-पीस कर बड़े भारी परिश्रम से पैसा जोड़कर भक्तिवश अपने द्रव्य को सत्कार्य में लगाया था। आज उसी मढ़िया प्रांगण में एक विशाल भव्य नन्दीश्वरद्वीप की रचना की गई है इसके साथ ही यहाँ पर वर्णी व्रती आश्रम, गुरुकुल एवं ब्राह्मी विद्या आश्रम भी चल रहे हैं। जिसके विद्यार्थियों व त्यागियों के माध्यम से धर्म की प्रभावना हो रही है।

जैन शोध संस्कार, आश्रम आदि की स्थापना में नारी का योगदान - वर्तमान समय में आर्यिका ज्ञानमति जी ने हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप की रचना करवाई एवं त्रिलोक शोध संस्थान खुलवाकर जैन संस्कृति के विकास के लिये आज की युवा पीढ़ी को प्रोत्साहित करने का बीड़ा उठाया है । उस संस्था के माध्यम से अनेक व्यक्ति जैन धर्म पर शोध सम्पन्न करके जैन संस्कृति को सुरक्षित रख सकते हैं।

आरा का महिलाश्रम चंदाबाई एवं शोलापुर का महिलाश्रम सुमतिबाई शाहा संचालित कर रही हैं। ये महिलाश्रम पूरे हिन्दुस्थान में प्रसिद्ध हैं। यहाँ पर महिलाएँ धर्म का अध्ययन करके उसके प्रचार-प्रसार में सहायक बनती हैं।

साहित्य सृजन द्वारा जैन संस्कृति का संरक्षण व विकास - अनेक ऐसी महिलाएँ इस भारत भूमि पर हुई हैं जिन्होंने अपने साहित्य के द्वारा जैन संस्कृति को सुरक्षित तो रखा ही साथ ही उसके विकास के लिये अमूल्य साहित्यिक निधि सौंपकर गई हैं। उनके साहित्य के द्वारा जैन संस्कृति को विकसित किया जा सकता है।

चालुक्य सम्राट के सेनापति नागदेव की पत्नि अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे ने कवि चक्रवर्ती पोन्न से ''पुराण चूड़ामणि'' नामक विश्रुत शांतिपुराण रचवाया था। दानचिंतामणि अत्तिमब्बे ने केवल नूतन काव्यों की रचना की ओर ही लक्ष्य नहीं दिया था, बल्कि पिछले काव्यों की रक्षा करने का भी दायित्व वहन किया। उन्होंने अपने पूज्य पिता का धर्म विलुप्त होने से बचाने के लिये शांति पुराण की एक हजार प्रतियाँ तैयार करवाकर कर्नाटक में सर्वत्र इसका प्रचार किया।

पूर्व कालीन नारी किसी बड़े ग्रंथ की टीका नहीं करती थीं, परंतु आर्यिका विशुद्धमति ने तिलोयपण्णत्ति, तिलोयसार ग्रंथ की टीका लिखकर जैन संस्कृति को सुरक्षित रखने का महत्वपूर्ण एवं सराहनीय कार्य किया है।

आर्यिका ज्ञानमति जी ने न्याय ग्रंथ, अष्टसहस्त्री, त्रिलोक भास्कर आदि की रचना की। सुमति बाई शाहा ने षट्खण्डागम पुस्तक का सम्पादन संक्षिप्त में किया है एवं जैन शब्दकोष बनाया है।

आर्यिका रणमति ने यशोधर काव्य की रचना की है जिसके अध्ययन से व्यक्ति जान सकता है कि किस प्रकार एक आटे के मुर्गे की बलि मात्र से व्यक्ति जन्म-जन्म तक दुःख भोगता है। इसके माध्यम से

अहिंसा का महत्व प्रतिपादित किया गया है।

इस प्रकार ऐसी अनेक नारियाँ हुई है जो विदुषी होने के साथ-साथ कवयित्री भी थीं। जिन्होंने अपनी साहित्यिक, आध्यात्मिक कृतियों के माध्यम से जैन संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखा है।

नारी द्वारा आर्यिका व्रत ग्रहण करके जैन संस्कृति का संरक्षण – आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक अनेक नारियों ने आर्यिका दीक्षा लेकर जिन धर्म की संस्कृति को सुरक्षित रखा है।

सर्वप्रथम भगवान आदिनाथ की पुत्रियों ब्राह्मी व सुन्दरी ने यह जानकर कि हमारे पिता को, जो तीन लोक के नाथ/आराध्य होने वाले हैं, हमारे पति के सम्मुख अपना मस्तक झुकाना पड़ेगा, उसी समय ये प्रतिज्ञा की कि वे विवाह नहीं करेंगी और आर्यिका बनकर यह आदर्श प्रस्तुत किया कि नारी भी एक भवावतारी होकर मोक्ष पद प्राप्त कर सकती है। इस प्रकार उन्होंने नारी के उत्थान के द्वार खोल दिये।

कला जगत में नारी का योगदान – कला क्षेत्र में भी नारी ने बहुत बड़ी भूमिका निभाई है। कला किसी भी देश की संस्कृति की प्रतीक है और नारी उसकी संरक्षिका । ''मार्ग'' की सम्पादिका सरयूदोषी ने जैन कला को बहुत आगे बढ़ाया है और आज भी वे शोध करके जैन कला को उजागर करने में प्रयत्न में लगीं हैं।

आज भी अनेक नारियाँ जैन धर्म/संस्कृति पर शोध कार्य कर रही हैं।

स्वतंत्रता संग्राम में चूंकि गाँधी जी ने अहिंसा को आधार बनाया था। इसलिये उस समय प्रायः प्रत्येक जैन परिवार की नारियों ने अपने पतियों को इस संघर्ष में जूझने की प्रेरणा दी क्योंकि उनका जीवन त्याग तपस्या से भरा था। उन्होंने अपने आभूषण आदि देकर ''अपरिग्रह'' का अनोखा उदाहरण प्रस्तुत किया।

उपसंहार – इस प्रकार हम देखते हैं कि नारी ने जैन संस्कृति के आदर्श को चरम सीमा तक पहुँचाया। उसी प्रभाव से समर्पित व्यक्तित्व उत्पन्न हुए और उन्होंने न केवल देश वरन् विदेशों में भी अहिंसा की निष्ठा की प्रभावना की क्योंकि इसी अहिंसा से सच्चरित्रता उद्भूत होती है। नारी के आदर्श का प्रभाव संबंधियों, परिवार, समाज, देश, वातावरण और अंततः विश्व पर पड़ता है व नारी ने अहिंसा के आधार पर पर्यावरण को शुद्ध रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय इंदिरा गांधी की पुत्रवधू मेनका गांधी भी अहिंसा को आधार बनाकर पर्यावरण को स्वच्छ बनाने के कार्य में जुटी हैं।

जैन संस्कृति की रक्षा व विकास में नारी की भूमिका का विश्लेषण किया जाये तो ज्ञात होता कि नारी ने बच्चों को संस्कारित करके, साहित्य का सृजन करके, मंदिर निर्माण करके एवं विश्लेषण व मूर्तियाँ उत्कीर्ण करवाकर जैन संस्कृति को सुरक्षित रखा है और आज भी नारी जैन संस्कृति के विकास के लिये प्रयत्नशील है।

826, मणिकंचन, स्टेट बैंक सिटी ब्रांच के सामने, जबलपुर

साहित्य सत्कार

- फिलास्फर कर्म साइंटिस्ट, लेखकगण लक्ष्मीचंद्र जैन, पद्मावतम्मा एवं जितेन्द्र जैन, प्रकाशक-नेशनल इंस्टीट्यूट आफ प्राकृत स्टडीज़ एण्ड रिसर्च, श्री धवल तीर्थम् श्री क्षेत्र, श्रवणबेलगोला, वर्ष 2007, मूल्य - 250/- (रूपये) इसमें दिगम्बर जैन आगम के रचयिता, कर्म सिद्धान्त के महारथी आचार्यों एवं विद्वानों के जीवन एवं उनके कृतित्व का अंग्रेजी में संकलन है।
- जैन धर्म में विज्ञान, सम्पादक - डॉ. नारायण लाल कछारा, प्रकाशक, भारतीय ज्ञान पीठ, दिल्ली, वर्ष 2006, मूल्य - रूपये 150/-। इसमें भारतीय प्रसिद्ध विद्वानों के अत्यंत महत्वपूर्ण लेखों का संकलन है ।
- अर्धमागधी साहित्य में गणित, लेखक-प्रोफेसर अनुपम जैन, प्रकाशक-जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूँ, मूल्य - 200/- रूपये, वर्ष 2008 । इस पुस्तक में लेखक द्वारा पांच अध्यायों में श्वेताम्बर एवं दिगम्बर जैन ग्रंथों में (विशेषकर करणानुयोग ग्रंथों में) समाहित गणित का प्रशंसनीय विवरण दिया है। ग्रंथ परिचय तथा ग्रंथकार विवरण भी संक्षेप में दिया गया है। यह पुस्तक संग्रहणीय है।
- एन्शियेन्ट जैन मेथामेटिक्स, लेखक व सम्पादक, डॉ. आर.सी. गुप्ता, प्रकाशक-जैन ह्युमेनिटीज़ प्रेस, कनाडा एवं यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका, मूल्य $ 34.95, प्रकाशक वर्ष - उल्लिखित नहीं। इस पुस्तक में यूनेस्को की संस्थाओं में रहे सदस्य डॉ. आर.सी. गुप्ता ने अपने अनेक उच्चतम कोटि के लेखों का संकलन कर प्रकाशित किया है। उनका कार्य मौलिक शोध कार्य पर होने से यह संग्रहणीय है। इसमें प्रो. तकाओ हयाशी, डॉ. अनुपम जैन तथा प्रोफेसर दीपक जाधव के भी दो लेख आये हैं तथा प्रस्तावना प्रो. लक्ष्मीचंद्र एवं डॉ. अनुपम जैन ने दी है। इस पुस्तक को अति अल्प मूल्य में निम्नलिखित पते पर से मंगाई जा सकती है : डॉ. आर.सी. गुप्ता, 20, रसबहार कालोनी, पो.आ. लहर गिर्द, झांसी (उत्तरप्रदेश)

– प्रो. एल.सी. जैन

जैन युवारत्न श्री हसमुख जैन गाँधी राष्ट्रीय अतिरिक्त महामंत्री मनोनीत

जैन संसद दिगम्बर जैन महासमिति ने नवनिर्वाचित राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री विजय जैन लुहाड़िया द्वारा सामजिक कार्यकर्ता जैन युवा रत्न श्री हसमुख जैन गाँधी, इन्दौर को महत्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपते हुए महासमिति का अतिरिक्त राष्ट्रीय महामंत्री मनोनीत किया है। श्री गाँधी ने सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अनेक कार्य किये हैं। जिसमें दिगम्बर जैन तीर्थ निर्देशिका का प्रकाशन, श्रवणबेलगोला एवं बावनगजा महामस्तकाभिषेक के आयोजन में प्रमुख भूमिका उल्लेखनीय है ।

– डॉ. अनुपम जैन, इन्दौर

जबलपुर में प्रो. एल.सी. जैन द्वारा रचित 'द ताव ऑफ जैना साइंसेज' के द्वितीय संस्करण का लोकार्पण

दिनांक 21.12.2008 को प्रो. एल.सी. जैन द्वारा रचित ''द ताव ऑफ जैना साइंजेस'' के द्वितीय संस्करण का लोकार्पण कार्यक्रम श्री पार्श्वनाथ चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन युगल मंदिर, पुरानी बजाजी, जबलपुर में विराजमान संत शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के परम धर्म प्रभावक शिष्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी मुनि श्री 108 प्रबुद्ध सागर जी महाराज के सानिध्य में सम्पन्न हुआ। इस मंगल अवसर पर मुख्य अतिथि डॉ. एम.पाल खुराना, कुलपति, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर एवं डॉ. शिव प्रसाद कोष्ठा, पूर्व कुलपति रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर पधारे। डॉ. कोष्ठा ने अपने उद्‌बोधन में बताया कि प्रो. एल.सी. जैन द्वारा इस पुस्तक में जैन धर्म के ऐतिहासिक वैज्ञानिक एवं साहित्यिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण विषय को अंतर्राष्ट्रीय स्तर की भाषा में आधुनिक गणितीय एवं वैज्ञानिक आधार लेकर तैयार किया गया है वह उनकी अनेक वर्षों की कठिन साधना व श्रम का फल है। पुस्तक में वर्णित विषयों का उपयोग उच्चतम श्रेणी के शोधार्थी एवं वैज्ञानिक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। इस प्रशस्त कार्य के पूर्ण करने के उपलक्ष्य में प्रो. जैन को हार्दिक बधाई व उनके दीर्घायु होने की मंगल कामना करता हूँ।

कुलपति श्री खुराना के अनुसार प्रो. जैन ने पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए जैन धर्म के हजारों वर्ष पुराने भौतिक रहस्यों को अंग्रेजी भाषा में आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में विश्व के समक्ष उद्‌घाटित किया है। यह ग्रन्थ एक महानतम उपलब्धि है जिससे आज की पीढ़ी एवं आधुनिक विज्ञान के शोधार्थी आदि लाभान्वित होंगे। हम उनके दीर्घायु होने एवं स्वस्थ्य जीवन की मंगल कामना करते हैं।

इस मंगल अवसर पर भोपाल से पधारे श्री अजीत कुमार जैन, महाप्रबंधक, म.प्र. लघु उद्योग निगम द्वारा प्रस्तुत पुस्तक के विषय में महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किये गये। उन्होंने बताया कि यह पुस्तक ''जैन विज्ञानों के मार्ग'' पर आधारित है। विषय जितना जटिल है, श्रम साध्य है, उतना ही समझने के बाद आनंददायक है। कंटकाकीर्ण मार्ग पर चलने के समान इसका स्वाध्याय व लेखन है। इसी मार्ग को प्रो. जैन ने अपनाया और चल पड़े, आज भी चल रहे हैं। इसलिए कहा है -

अतिकंटकाकीर्ण मार्ग में जिनका जीवन सुमन खिला।
गौरवगंध उन्हें उतना ही, यत्र-तत्र सर्वत्र मिला।।

आगे अजीत जी ने बताया कि जितने भी प्रकार के विज्ञान अथवा विधाएँ हैं, उनका स्रोत या जनक जैन साहित्य विषयक कर्म सिद्धान्त या कर्म विज्ञान है। जैन श्रुत आगमों में 14 पूर्वों द्वारा कर्म तथा अनेक प्रकार की विधाओं पर विशाल सामग्री मिलती है। कर्म का अध्ययन एक कंटकाकीर्ण मार्ग है क्योंकि वह जटिल गणित संदृष्टिमय सूत्रों, समीकरणों का आधार लेकर रचित हुआ। इस गणितीय मार्ग को इस पुस्तक ''द ताव ऑफ जैना साइंसेज'' में छह मोनोग्राफ द्वारा दर्शाया गया है जो जैन धर्म के अन्तस्तल-कर्मविज्ञान

की रूपरेखाओं को समग्रता से प्रस्तुत करते हैं। नवीं सदी के महावीराचार्य ने ''गणितसार संग्रह'' में गणित की प्रशंसा करते हुए लिखा कि तीनों लोकों में सभी ''चर व अचर'' वस्तुओं का अस्तित्व गणित के बिना नहीं है। आइंस्टाइन ने भी कहा कि जब तक किसी भी सिद्धान्त में गणित का प्रवेश नहीं होता तब तक वह विवाद के घेरे में रहता है तथा टूटने की कगार पर रहता है। अतः जैन कर्म विज्ञान ने कर्म की दो विधाओं- जनन एवं विनाश के गणितीय चिन्तन द्वारा और चेतन की ग्रन्थि को तोड़ने का मार्ग बतलाया है। पहले कर्म को रोका जाता है आत्मा के प्रदेशों में प्रवेश करने से । फिर कर्म को क्रम-क्रम से कम करते हुए आत्मा को कर्म की पराधीनता से मुक्त करते हुए, जीव को स्वतन्त्रता से लब्ध उसकी अनन्त शक्तियों की महिमा को निज स्वरूप में स्थित किया जाता है ।

इस अवसर पर महाराज जी ने अपने प्रवचन में बताया कि हमारे पास ज्ञान तो है, किन्तु उसका विधिवत उपयोग न कर पाने से हम संसार में भटक रहे हैं। जैन शास्त्रों में बताई गई महत्वपूर्ण बातों को प्रो. जैन ने इस पुस्तक में अच्छे तरीके से सूत्रबद्ध किया है। श्री जैन को मेरा शुभाशीष। कार्यक्रम का संचालन नरेन्द्र नेता और अध्यक्षता कोमल सिंघई ने की। इस अवसर पर श्री अजीत जैन, सुमेर चन्द्र जैन, खेमचन्द्र जैन, राकेश गोयल, सागर, प्रशांत बड़कुल एवं राजकुमार विद्यार्थी की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

श्रीपाल जैन 'दिवा'

▼▼▼

मुनिश्री आर्जवसागर जी महाराज का ससंघ श्री महावीरजी में मंगल प्रवेश

6 मार्च 2009 को श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र में संत शिरोमणी आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी के परम शिष्य परम पूज्य मुनिश्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज का ससंघ मंगल प्रवेश हुआ। क्षेत्र के मैनेजर, ब्र. कमलाबाई एवं अन्य लोगों ने मुनिश्री की आरती उतारी तथा चरण प्रक्षाल किया। 12 मार्च को राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत ने महावीर जी में भगवान महावीर स्वामी के दर्शन कर मुनिश्री से आशीर्वाद लिया। मुनिश्री का 15 मार्च को गंगापुर सिटी में मंगल प्रवेश हुआ।

भास्कर न्यूज, लालसोट : रविवार 22 मार्च, मुनिश्री आर्जवसागर जी महाराज ने कहा है कि भावना पाषाण को भगवान बना देती है। उन्होंने कहा कि ईश्वर की निष्काम भक्ति करने व धर्मग्रन्थों में बताए धर्मानुसार आचरण तथा साधना अभिशाप को भी वरदान बना देती है। मनुष्यों को चाहिए कि वह धर्मग्रन्थों में बताए गए रास्तों पर चलकर जीवन को सफल बनाए। मुनिश्री उपखंड मुख्यालय पर बड़े जैन मंदिर में आयोजित धर्मसभा को संबोधित करते हुए अपने प्रवचन दे रहे थे। उन्होंने कहा कि काम, लोभ, मोह तथा क्रोध में आकर इंसान का विवेक नष्ट हो जाता है। विवेक नष्ट होने के कारण ही इंसान की वासना उसे शैतान बना देती है।

मुनि श्री विहार करते हुए श्री पदमपुराजी अतिशय क्षेत्र की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

भाव विज्ञान पत्रिका

✳✳ परम संरक्षक ✳✳

श्री गौतम काला, राँची
श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, देहरादून
श्री पदमराज होळल, दावणगेरे
श्री सोहनलाल कासलीवाल, सेलम
श्री संजय जैन "सोगानी", राँची
श्री आकाश टोंग्या, भोपाल

✳✳ संरक्षक ✳✳

श्री विजय अजमेरा, रीवा
श्री के सी जैन, डि. एक्साइज आ., छतरपुर

✳✳ आजीवन सदस्य ✳✳

श्री यू.सी. जैन, एलआईसी–दमोह
श्री जिनेन्द्र उस्ताद, दमोह
श्री नरेन्द्र जैन, सबलू दमोह
श्री निर्मल कुमार, इटोरिया
श्री संजय जैन, पथरिया दमोह
श्री अभय कुमार जैन, गुड्डे पथरिया, दमोह
श्री निर्मल जैन इटोरिया, दमोह
श्री राजेश जैन हिनोती, दमोह
श्री चंदूलाल दीपचंद काले, कोपरगाँव
श्री पूनमचंद चंपालाल ठोले, कोपरगाँव
श्री अशोक चंपालाल ठोले, कोपरगाँव
श्री नितिन मदनलाल कासलीवाल, कोपरगाँव
श्री चंपालाल दीपचंद ठोले, कोपरगाँव
श्री अशोक पापड़ीवाल, कोपरगाँव
श्री सुभाष भाऊलाल गंगवाल, कोपरगाँव
श्री तेजपाल कस्तूरचंद गंगवाल, कोपरगाँव
श्री सुनील गुलाबचंद कासलीवाल, कोपरगाँव
श्री श्रीपाल खुशीलचंद पहाड़े, कोपरगाँव
श्री शिखरचंद अशोक कुमार लोहाड़े, कोपरगाँव
श्री प्रेमचंद कुपीवाले, छतरपुर
श्री चतुर्भुज जैन, सब इंजीनियर, छतरपुर
श्री प्रदीप जैन, इनकमटैक्स, छतरपुर
श्री एम.के. जैन, लघु उद्योग निगम, भोपाल
श्री रतनचंद देवेन्द्र कुमार बस वाले, छतरपुर
श्री कमल कुमार जतारावाले, छतरपुर
श्री भागचन्द जैन, छतरपुर
श्री देवेन्द्र डयोढ़िया, छतरपुर
अध्यक्ष, महिला मंडल, डेरा पहाड़ी, छतरपुर
अध्यक्ष, महिला मंडल शहर, छतरपुर
पंडित श्री नेमीचंद जैन, छतरपुर
डॉ. सुरेश बजाज, छतरपुर
श्री विनय कुमार जैन, टीकमगढ़
सिंघई कमलेश कुमार जैन, टीकमगढ़
श्रीमती संगीता बजाज (पत्नी श्री हरीश बजाज) टीकमगढ़
श्री संतोष कुमार जैन, टीकमगढ़
श्री अनुज कुमार जैन, टीकमगढ़
श्री सुनील कुमार जैन, सीधी
श्रीमती ओमा जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती केशरदेवी जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती शकुन्तला जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्री दिनेश चंद जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्री प्रमोश कुमार जैन, अशोक नगर
श्रीमती सुषमा जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्री ब्र. विनोद जैन (दीदी), लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती सुप्रभा जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती प्रमिला जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती मिथलेश जैन, लश्कर, ग्वालियर
स.सि. श्री अशोक कुमार जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती मीना जैन, हरीशंकर पुरम, ग्वालियर
श्रीमती पन्नी जैन, मोहना, ग्वालियर
श्रीमती मीना चौधरी, लश्कर, ग्वालियर
श्री निर्मल कुमार चौधरी, लश्कर, ग्वालियर
श्री कल्याणमल जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती सूरजदेवी जैन, माधोगंज, ग्वालियर
श्रीमती उर्मिला जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती विमला देवी जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती विमला जैन, माधोगंज, ग्वालियर
श्रीमती मोती जैन, थाठीपुर, ग्वालियर
श्रीमती अल्पना जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती रोली जैन, थाठीपुर, ग्वालियर
श्रीमती ममता जैन, माधव नगर, ग्वालियर
श्रीमती नीती चौधरी, लश्कर, ग्वालियर
श्रीमती आभा जैन, चेतकपुरी, ग्वालियर
श्रीमती सुशीला जैन, ग्वालियर
श्रीमती पुष्पा जैन, लोहिया बाजार, ग्वालियर
श्रीमती अंगूरी जैन, लश्कर, ग्वालियर
श्री ओ.पी. सिंघई, ग्वालियर
श्रीमती मंजू एवं शशी चांदोरी, ग्वालियर
श्री सुभाष जैन, ग्वालियर
श्री खेमचंद जैन, ग्वालियर
वर्धमान इंग्लिश अकादमी, तिनसुखिया (असम)
श्रीमती सितारादेवी जैन, जबलपुर
श्री सुरेशचंद्र जैन, भिण्ड
श्री महेशचंद जैन पहारिया, भिण्ड
श्री विजय जैन, रेडीमेड वाले, भिण्ड
श्री संजीव जैन 'बल्लू', चंबल डेरी वाले, भिण्ड
श्री महेन्द्र कुमार जैन, भिण्ड
श्री महावीर प्रसाद जैन, भिण्ड
श्रीमती मीरा जैन ध.प. श्री सुमत चंद जैन, भिण्ड

जमुना तट शौरीपुर में प्रभु, नेमि गर्भ जन्म कल्याण । पाया श्रीयम, धन्य मुनीश्वर, विमलासुत जिन ने निर्वाण।।
सुप्रतिष्ठित महासाधु ने, केवलज्ञान जगाया था। शौरीपुर में देवों ने आ-पूजाकर गुण गाया था ।।
- मुनि आर्जवसागर

श्री महावीरजी में मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत
मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज से आशीर्वाद लेते हुए।

विहार के समय धर्म चर्चा का आनंद लेते हुए
भिण्ड के भक्तगण

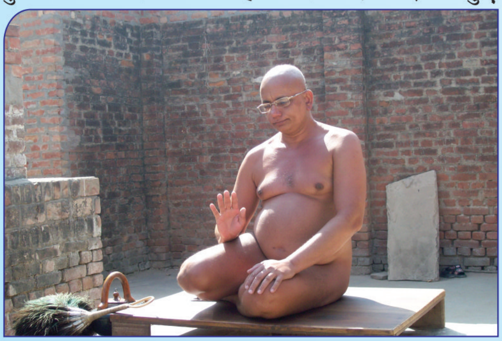

आहार चर्या के बाद भक्तों को आशीर्वाद
देते हुए मुनि श्री

यमुना नदी के तट पर वटेश्वर में
मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज की प्रवचन धारा

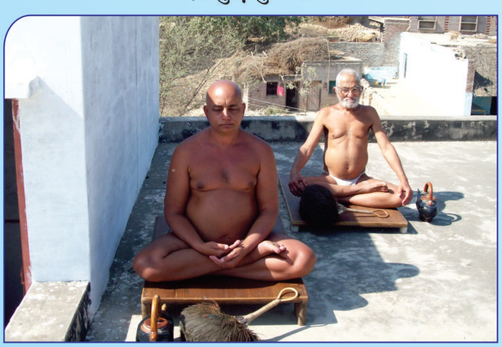

सिद्धक्षेत्र शौरीपुर में ध्यान मग्न मुनिसंघ

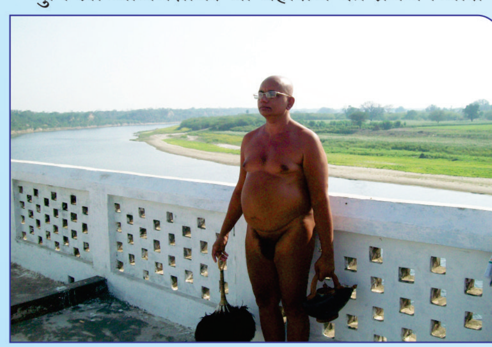

यमुना के तट पर मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज

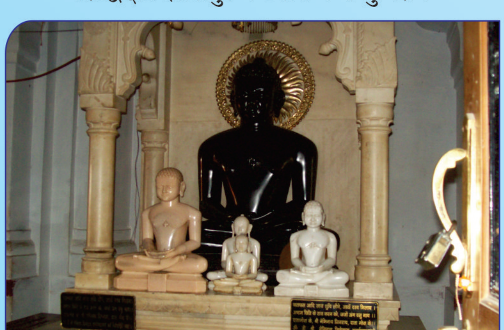

सिद्ध क्षेत्र शौरीपुर के मूल नायक
भगवान नेमिनाथ

आहार से पूर्व मुनि श्री की नवधा भक्ति
करते हुए भक्तगण

रजि. क्रं. **MPHIN/2007/27127**

आहार के पूर्व मुनि श्री की पूजन करते हुए भक्तगण

आहारोपरान्त भक्तगण मुनि श्री के साथ

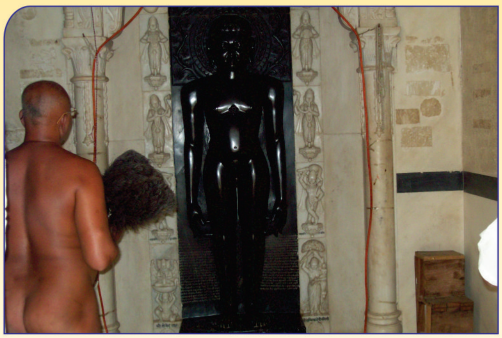

शौरीपुर मंदिर क्रं. 2 में नेमिनाथ भगवान के दर्शन करते हुए मुनिश्री

शौरीपुर की वाटिका निहारते हुए मुनिसंघ

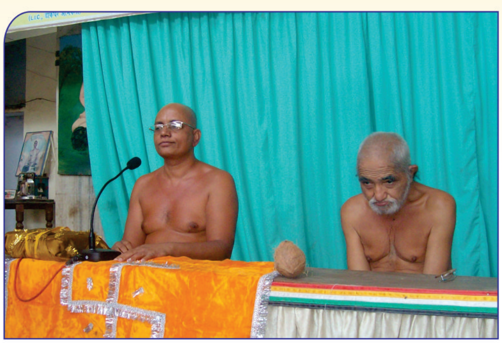

दिगम्बर जैन परेड मंदिर, भिण्ड में मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज एवं ऐलक श्री अर्पण सागर जी महाराज

महावीर जी में मुनि श्री का विहार कराने वाले भक्तगणों का सम्मान करते हुए।

Akash Tongya - 98939 27071 सौजन्य से M.L. Tongya - 94250 11360

SAMTA ENTERPRISES

All Kinds of Building Material 'UPAL' A.C. Sheets ISI Mark etc.

ASSOCIATED DEALER : ACC CEMENT

Infront Govt. High School Main Road, Gandhi Nagar, Bhopal - 462 001

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। सम्पादक - श्रीपाल जैन 'दिवा,' एल-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)